ISSN No: 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

भाग 4 अंक 2 अगस्त 2024

Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors

SAAHAS

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

3/2, ड्रमण्ड रोड, (नथानी अस्पताल के सामने), प्रयागराज-211001, (U.P.) दूरभाष-9452254524
वेबसाइट : saahasindia.org, ई-मेल-contact.saahas@gmail.com
Article Submission :– krishiudyandarpan.hi@gmail.com

सम्पादकीय मण्डल

प्रधान संपादक	:	**डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, उद्यान विज्ञान विभाग एवं फल विज्ञान विभाग चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)
वरिष्ठ संपादक	:	**डॉ. रोशन लाल राऊत** वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं विभागाध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बालाघाट (एम.पी.)
सह सम्पादक गण	:	**डॉ. नीलम राव रंगारे** वैज्ञानिक, संस्था निदेशालय इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, लाभण्डी, रायपुर (छत्तीसगढ़) **डॉ. नंगखाम जेम्स सिंह** पशुचिकित्सक क्षेत्र सहायक,पशुपालन एवं डेयरी विभाग, शुआट्स, (उ.प्र.) **डॉ. खलील खान** मृदा वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र दलीप नगर कानपुर देहात, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कानपुर (उ.प्र.) **डॉ. प्रमिला** सहायक अध्यापक-सह-वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान, उद्यान विभाग पं. दीन दयाल उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपरी, कोठा, बिहार **प्रखर खरे** एम.एस.सी. उद्यान विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज (उ.प्र.)
पांडुलिपि संपादक	:	**स्निग्धा हल्दर** सहायक संपादक, एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)
कंटैट लेखक/ स्तंभ लेखक	:	**डॉ. विशाल नाथ पाण्डेय** विशेष कार्य अधिकारी आई.सी.ए.आर., आई.ए.आर.आई, झारखण्ड, हजारीबाग (झारखण्ड)
फोटोग्राफी	:	**स्वप्निल सुभाष स्वामी** वेब एडिटर प्रितेश हलदार
प्रकाशक	:	**एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)**
प्रकाशक	:	**Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors (SAAHAS)**

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

इस पृष्ठ में

- कृषक महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली शारीरिक समस्यायें एवं समाधान 1-3
  कीर्ति खत्री
- पशुओं में खुरपका-मुंहपका रोगः कारण एवं निवारण 4-6
  कंचन आर्या एवं जी. एस. बिष्ट
- ओस्टर मशरूम की उत्पादन तकनीक 7-9
  राम प्रवेश प्रसाद, प्रमिला एवं कृष्ण कुमार
- भारत में भूमि अभिलेखों का आधुनिकीकरण 10-11
  कुमारी अंजना गुप्ता एवं आर. एल. राऊत
- बलराम एप की उपयोगिता 12-13
  कुमारी अंजना गुप्ता एवं आर. एल. राऊत
- औषधीय गुण व आय का उत्तम श्रोतः आंवला की वैज्ञानिक खेती 14-18
  कुलदीप कुमार शुक्ला, लवकुश पाण्डेय, प्रद्योत कुमार नायक, गौतम प्रताप सिंह एवं आशीष आनंद
- जल का अनमोल रत्न मखाना 19-23
  अमृत वार्षिनी एवं स्वप्निल श्रीवास्तव
- अमरूद की उत्पादन तकनीक और प्रबंधन 24-29
  एन. आर. रंगारे, डी. के. जायसवाल एवं नारायन लाल
- सेमलः लाल फूलों से अधिक प्रकृति का अनसुना वरदान 30-32
  स्वप्निल श्रीवास्तव एवं अमृत वर्षिणी
- सोलेनेसियस सब्जियों का औषधीय महत्व 33-34
  इमामुद्दीन शाह, अजय कुमार, नीलिमा रावत एवं हितैषी कुड़ियाल
- प्राकृतिक खेती 35-40
  गौरव शुक्ला, खलील खान एवं वेद प्रकाश
- जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव 41-44
  खलील खान, अजय कुमार सिंह एवं शुभम् यादव

❖❖

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

ISSN No. 2583-3316

कृषक महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली शारीरिक समस्यायें एवं समाधान

कीर्ति खत्री
संसाधन प्रबंधन उपभोगता विज्ञान विभाग, सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
पत्राचारकर्ता: keertikhatri01@gmail.com

परिचय

कृषक महिलायें विभिन्न श्रम प्रधान गतिविधियों में संलग्न होकर कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह कार्य अक्सर उनके कार्यों की दोहराव और ज़ोरदार प्रकृति के कारण शारीरिक समस्याओं का कारण बनता है। यह लेख कृषक महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली सामान्य शारीरिक समस्याओं को रेखांकित करता है और इन चुनौतियों के समाधान के लिए व्यावहारिक समाधान सुझाता है। कृषक महिलाओं द्वारा सामना की जाने वाली सामान्य शारीरिक समस्यायें इस प्रकार है।

पीठ के निचले हिस्से में दर्द

कारण

- **लंबे समय तक झुकना:** कृषक महिलायें अक्सर ऐसी गतिविधियों में संलग्न रहती हैं, जिनमें उन्हें लंबे समय तक आगे की ओर झुकना पड़ता है, जैसे कि रोपण, निराई और कटाई। लगातार झुकने से पीठ के निचले हिस्से की मांसपेशियों पर काफी दबाव पड़ता है।
- **भारी भार उठाना:** भारी भार, जैसे कि उर्वरक की बोरियां, उपज और उपकरण उठाना, अगर सही ढंग से न किया जाए तो पीठ के निचले हिस्से में खिंचाव और चोट लग सकती है।
- **दोहराए जाने वाले कार्य:** बार-बार किए जाने वाले कार्य, जैसे कि कुदाल चलाना या खोदना, अत्यधिक उपयोग से पीठ के निचले हिस्से में चोट लग सकती है, जिससे मांसपेशियों में थकान और दर्द हो सकता है।

लक्षण

लगातार दर्द: पीठ के निचले हिस्से में लगातार दर्द या तेज दर्द, जो हिलने-डुलने या लंबे समय तक खड़े रहने से बढ़ सकता है। लचीलेपन में कमी और पीठ के निचले हिस्से में जकड़न की भावना, जिससे झुकना या मुड़ना मुश्किल हो जाता है। रोजमर्रा के कार्यों को करने में कठिनाई, जिसमें दर्द और कठोरता के कारण झुकने, उठाने या मुड़ने की आवश्यकता होती है।

चित्र संख्या:1 व 2: कृषि कार्य करते हुए ग्रामीण महिलाएं

कंधे का दर्द

कारण

पेड़ों से फल तोड़ना या सूखने के लिए कपड़े लटकाने जैसे कार्यों में बार-बार हाथ का ऊपर जाना जाना शामिल होता है, जिससे कंधे की मांसपेशियों और जोड़ों पर दबाव पड़ सकता है। भारी टोकरियाँ, बाल्टियाँ या अन्य भार उठाने से कंधों पर अत्यधिक दबाव पड़ सकता है, जिससे दर्द और चोट लग सकती है। गाय का दूध निकालने या हाथ के औज़ारों का उपयोग करने जैसी लगातार गतिविधियाँ कंधों में बार-बार होने वाले खिंचाव की चोट का कारण बन सकती हैं।

लक्षण

कंधे में बेचैनी या दर्द जो बाह से नीचे या गर्दन तक फैल सकता है। कंधे के जोड़ के आसपास सूजन, जो गर्मी और लालिमा के साथ हो सकती है। हाथ और कंधे को स्वतंत्र रूप से हिलाने की सीमित क्षमता, जिससे उन कार्यों को करना चुनौतीपूर्ण हो जाता है, जिनमें पहुँचना या उठाना शामिल होता है।

घुटने का दर्द

कारण

खेती के कई कार्यों के लिए लंबे समय तक उकडू बैठना पड़ता है, जैसे पौधे रोपना या जमीन के करीब फसल काटना, जिससे घुटनों के जोड़ों पर दबाव पड़ सकता है। निराई-गुड़ाई या फसलों की देखभाल जैसी गतिविधियों के लिए अक्सर लंबे समय तक घुटनों के बल बैठना पड़ता है, जिससे घुटनों पर दबाव पड़ता है। भारी वजन उठाने से घुटने का दर्द बढ़ सकता है, खासकर अगर उचित उठाने की तकनीक का उपयोग नहीं किया जाता है।

लक्षण

घुटने में तेज या हल्का दर्द, खासकर शारीरिक गतिविधि के दौरान या बाद में होता है। घुटने के जोड़ के आसपास सूजन, जो गति को सीमित कर सकती है और असुविधा पैदा कर सकती है। गति की सीमा कम हो जाती है, जिससे बिना दर्द के घुटने को पूरी तरह मोड़ना या सीधा करना कठिन हो जाता है।

हाथ और कलाई में दर्द

कारण

लगातार कार्य जैसे कि फसल काटना, जानवरों का दूध निकालना, या हाथ के औजारों का उपयोग करने से हाथों और कलाइयों में बार-बार तनाव होने से चोट लग सकती है। पकड़ने वाले उपकरणः लंबे समय तक उपकरणों को पकड़ने और उपयोग करने से हाथ और कलाई की मांसपेशियों और टेंडन पर तनाव पड़ सकता है। उपज को बार-बार तोड़ने या संभालने से हाथों और कलाई में चोट लग सकती है।

लक्षण

हाथों और कलाइयों में दर्द या तेज दर्द, जो उपयोग के साथ खराब हो सकता है। स्तब्ध हो जानाः उंगलियों या हाथों में झुनझुनी या सुन्नता, अक्सर तंत्रिका संपीड़न के कारण। वस्तुओं को मजबूती से पकड़ने में कठिनाई होती है, जिससे उन कार्यों को करना चुनौतीपूर्ण हो जाता है, जिनमें मैन्युअल निपुणता की आवश्यकता होती है।

गर्दन में दर्द

कारण

खराब मुद्राः काम करते समय खराब मुद्रा बनाए रखना, जैसे लंबे समय तक सिर को आगे या नीचे झुकाना, गर्दन की मांसपेशियों में खिंचाव पैदा कर सकता है। सिर पर भारी भार को संतुलित करना, कुछ कृषक समुदायों में एक आम प्रथा है, जिससे गर्दन में खिंचाव और चोट लग सकती है। ऐसे कार्य जिनमें नीचे देखने की आवश्यकता होती है, जैसे कि फसल लगाना या निरीक्षण करना, गर्दन में तनाव और असुविधा पैदा कर सकता है।

लक्षण

गर्दन में लगातार या रुक-रुक कर होने वाला दर्द, जो कंधों और पीठ के ऊपरी हिस्से तक बढ़ सकता है। गर्दन में लचीलापन और अकड़न कम हो जाती है, जिससे सिर घुमाना मुश्किल हो जाता है। गर्दन को स्वतंत्र रूप से हिलाने में कठिनाई, जो उन कार्यों को करने की क्षमता को प्रभावित कर सकती है, जिनके लिए चारों ओर या ऊपर और नीचे देखने की आवश्यकता होती है।

समाधान एवं निवारक उपाय

इन शारीरिक समस्याओं को प्रभावी ढंग से संबोधित करने के लिए, निवारक उपायों और एर्गोनोमिक (श्रमदक्षता शास्त्र) समाधानों को लागू करना आवश्यक है। यहाँ कुछ व्यावहारिक दृष्टिकोण दिए गए हैं:

क. एर्गोनोमिक (श्रमदक्षता शास्त्र) हस्तक्षेप

एर्गोनॉमिक रूप से डिज़ाइन किए गए टूल का उपयोग करें, जो मांसपेशियों और जोड़ों पर तनाव को कम करते हैं।

उदाहरण के लिए, लंबे हैंडल वाले उपकरण अत्यधिक झुकने से बचने में मदद कर सकते हैं। गलत मुद्राओं और गतिविधियों को कम करने के लिए कार्य क्षेत्रों को व्यवस्थित करें। उचित उठाने की तकनीक का प्रयोग करना चाहिए। कृषक महिलाओं को उठाने की उचित तकनीक, जैसे घुटनों के बल झुकना और पीठ सीधी रखना, के बारे में प्रशिक्षित करे। भारी भार को हाथ द्वारा ले जाने के बजाय परिवहन के लिए व्हीलब्रो, ट्रॉली या अन्य उपकरणों का उपयोग करना चाहिए। लंबे समय तक स्थिर मुद्राओं से बचने के लिए नियमित ब्रेक लेने को प्रोत्साहित करें। लचीलेपन को बनाए रखने और मांसपेशियों के तनाव को कम करने के लिए काम से पहले, उसके दौरान और बाद में स्ट्रेचिंग दिनचर्या लागू करना चाहिए।

ख. स्वास्थ्य एवं कल्याण कार्यक्रम

मांसपेशियों को मजबूत करने और समग्र शरीर के लचीलेपन में सुधार के लिए सामान्य शारीरिक फिटनेस को बढ़ावा देना। शारीरिक समस्याओं के शीघ्र निदान और उपचार के लिए स्वास्थ्य देखभाल तक पहुँच की सुविधा प्रदान करना।

ग. सहायक उपकरणों का प्रयोग

घुटनों के बल चलने के दौरान घुटनों पर प्रभाव को कम करने के लिए सुरक्षात्मक गियर का उपयोग करें। सहायक जूतेः ऐसे जूते पहनें जो निचले अंगों पर तनाव को कम करने के लिए पर्याप्त समर्थन और कुशनिंग प्रदान करते हैं।

घ. शिक्षा और जागरूकता

शारीरिक स्वास्थ्य और निवारक रणनीतियों के महत्व के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए कार्यशालायें आयोजित करें। शारीरिक स्वास्थ्य को बनायें रखने के लिए सर्वोत्तम प्रथाओं पर सूचनात्मक सामग्री का वितरण होना चाहिए ।

निष्कर्ष

कृषि कार्य की शारीरिक माँगों के कारण कृषक महिलाओं को महत्वपूर्ण शारीरिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। एर्गोनोमिक प्रथाओं को लागू करके, उचित तकनीकों को बढ़ावा देकर और जागरूकता को बढ़ावा देकर, इन मुद्दों को प्रभावी ढंग से कम किया जा सकता है। कृषक महिलाओं का स्वास्थ्य और कल्याण सुनिश्चित करना न केवल उनके व्यक्तिगत कल्याण के लिए बल्कि कृषि क्षेत्र की निरंतर उत्पादकता और दक्षता के लिए भी महत्वपूर्ण है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

पशुओं में खुरपका-मुंहपका रोगः कारण एवं निवारण

कंचन आर्या[1*] एवं जी. एस. बिष्ट[2]

[1]विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान) एवं [2]उद्यान विज्ञान विभाग

कृषि विज्ञान केंद्र, गैना, पिथौरागढ़, जी.पी.यू.ए.टी, पंतनगर

पत्राचारकर्ता: kanchanarya34@gmail.com

परिचय

संक्रामक रोग को एक रोगजनक या उसके विषाक्त उत्पाद के कारण होने वाली बीमारी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जो एक संक्रमित पशु से अतिसंवेदनशील जानवरों में संचरण के माध्यम से उत्पन्न होता है। खुरपका-मुंहपका रोग,मवेशी, सूअर, भेड़ और वन्यजीव प्रजातियों सहित दो खुर वाले पशुओं की एक अत्यधिक संक्रामक बीमारी है। खुरपका-मुंहपका रोग को आर्थिक प्रभाव की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण पशुधन रोग माना जाता है। पशु उत्पादकता में कमी, विकास में रुकावट, गर्भपात, प्रजनन में देरी और विशेष रूप से युवा पशुओं में मृत्यु जैसे भारी आर्थिक नुकसान पशुपालको को उठाना पेड़ता है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में पशु उत्पादों पर प्रतिबंध, दीर्घकालिक प्रभाव के रूप में प्रदर्शित होता है। केवल टीकाकरण से बीमारी को नियंत्रित करना संभव नहीं है बल्कि, जब तक इसे पशुओं की आवाजाही पर नियंत्रण के साथ नहीं जोड़ा जाता है, इसलिए बीमारी के प्रभावी नियंत्रण के लिए संक्रमित पशु पहचान प्रणाली और किसानो का रोग के प्रति जागरूक होना भी आवश्यक है।

खुरपका-मुंहपका रोग का परिचय

खुरपका और मुंहपका रोग (एफएमडी) को विश्व स्तर पर लंबे समय से पशुधन आबादी के लिए एक गंभीर खतरे के रूप में मान्यता दी गई है, जिससे कृषक समुदाय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। खुरपका-मुंहपका तेजी से फैलने वाली एक संक्रामक एवं घातक विषाणु जनित वायुकोशीय रोग है, जो मुहपका खुरपका विषाणु (Foot-and-mouth disease virus) के द्वारा होता हैं। इस विषाणु के अनेक प्रकार तथा उपदृ प्रकार है, इनकी प्रमुख किस्मों में ओ,ए,सी एशिया-1, एशिया-2, एशिया-3, सैट 1, सैट 2, सैट 3 तथा इनकी 14 उप किस्में शामिल है। हमारे देश में यह रोग मुख्यतः ओ,ए,सी तथा एशिया-1 प्रकार के विषाणुओं द्वारा होता है। यह रोग मुख्य रूप से विभक्त खुर /दो खुरों वाले पशुओ जैसे गाय, भैंस, बकरी, हिरन, भेंड़, सूअर तथा अन्य जंगली पशुओ में होता है। यह रोग किसी भी उम्र के पशुओं मे हो सकता है। इसके लिए कोई मौसम निश्चित नहीं है, हालांकि बरसात के मौसम मे यह रोग ज्यादा देखा जा सकता हैं। खुरपका-मुंहपका एक सूची ए बीमारी है, जो जीवित पशुओं और उनके उत्पादों के निर्यात को प्रभावित कर सकती है, और कई देश प्रभावित जानवरों और पशु व्युत्पन्न पर लगाए गए व्यापार प्रतिबंधों का शिकार होते हैं। इस रोग से दूध और अन्य पशुधन उत्पादों के व्यापार पर प्रत्यक्ष नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। संक्रमित मवेशियों के दूध उत्पादन मे अचानक गिरावट आ जाती हैं। ऐसे में इस बीमारी के रोकथाम के लिए गायों और भैंसों का टीकाकरण बहुत महत्वपूर्ण है। प्रधानमंत्री ने पशुओं में खुरपका-मुंहपका रोग और ब्रूसेलोसिस के नियंत्रण तथा उन्मूलन हेतु राष्ट्रीय पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम (राष्ट्रीय पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम, (National Animal Disease Control Programme-NADCP) की शुरुआत की है। यह कार्यक्रम पूर्णतः केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित है।

खुरपका-मुंहपका रोग के फैलने के कारण

यह रोग जानवरों ममें विभिन्न कारणों से फैलता है जो की निम्नलिखित हैः

- **यह रोग मुख्यतः** संक्रमित जानवर के विभिन्न स्त्राव और उत्सर्जित द्रव जैसे लार, गोबर, दूध के साथ सीधे संपर्क मे आने, दाना, पानी, घास, बर्तन, दूध निकालने वाले व्यक्ति के हाँथो से और हवा से फैलता है। इस स्त्राव मे विषाणु बहुत अधिक संख्या मे होते हैं और स्वस्थ जानवर के शरीर मे मुँह और नाक के माध्यम से प्रवेश कर जाते हैं।
- विषाणु जीम, मुंह, खुरों के बीच की जगह, थनों तथा घाव

आदि के द्वारा स्वस्थ पशु के रक्त में पहुँचते हैं तथा लगभग 4-5 दिनों के अंदर उसमें बीमारी के लक्षण पैदा करते हैं।

• संक्रमित जानवरों की साँस छोड़ने वाली हवा में बड़ी मात्रा में एरोसोल वायरस होते हैं, जो श्वसन या मौखिक मार्गों के माध्यम से अन्य जानवरों को संक्रमित कर सकते हैं। यह वायरस जमीन पर 60 किमी. और समुद्र के रास्ते 300 किमी. तक यात्रा कर सकता है।

• संक्रमित जानवरो को स्वस्थ जानवरो के एक साथ बाड़े मे रखने से, एक ही बर्तन से चारा खाने और पानी पीने से फैलता हैं। विषाणु घास, चारा, तथा फर्श पर कई महीनों तक जीवित रह सकते हैं लेकिन गर्मी के मौसम में यह बहुत जल्दी नष्ट हो जाते हैं।

• नमदृवातावरण, पशु की आन्तरिक कमजोरी, पशुओं तथा नजदीकी क्षेत्र में रोग का प्रकोप इस बीमारी को फैलाने में सहायक कारक है।

• संक्रमित दूध के माध्यम से यह रोग बछड़ों में फैल सकता है।

• अधिकांश जानवर संक्रमण के बाद ठीक होने के बाद वाहक के रूप में बने रहते हैं। वाहक पशु विषाणु को एक जानवर से दूसरे जानवर में स्थानांतरित कर सकता है। वाहक मवेशी 6-24 महीनों तक ग्रासनली-ग्रसनी द्रव में वायरस को बरकरार रख सकते हैं।

खुरपका-मुंहपका रोग के लक्षण

• खुरपका-मुंहपका की विशेषता तेज बुखार (104-106^{o}F) और पशु के मुंह, थनो और पैरों में छाले होना है।

• बीमार पशु के मुँह मे मुख्यत जीभ के उपर, होठो के अंदर, मसूड़ो पर साथ ही खुरो के बीच की जगह पर छोटे-छोटे छाले बन जाते है। मुँह से निरंतर तथा अत्यधिक लार निकलना (जमीन तक लम्बी रस्सियों के रूप में लटकी हुई लार) प्रमुख लक्षण है।

• मुँह मे छाले हो जाने की वजह से पशु जुगाली बन्द कर देता हैं और चारा खाना छोड़ देता है, पशु सुस्त पड़ जाते और कमजोर होने लगते हैं।

• खुर में जख्म होने की वजह से पशु लंगड़ाकर चलता है।

• थनो में छाले होने के कारण थनैला रोग होने का भय बना रहता है।

• दुधारू पशुओं में दूध का उत्पादन 80 प्रतिशत तक कम हो जाता है।

• प्रभावित पशु स्वस्थ होने के उपरान्त भी महीनों तक और कई बार जीवनपर्यन्त हांफते रहता है, और रोग के वाहक बन जाते हैं।

• गर्भवती पशुओं में गर्भपात की संभावना बनी रहती है। समय पर इलाज नहीं होने के कारण बछड़े मर भी सकते हैं।

खुरपका-मुंहपका रोग का उपचार

• सबसे पहले निकटतम पशुचिकित्सा अधिकारी को सूचित करे।

• प्रभावित पशुओं को अन्य पशुओं से तुरंत अलग करे। बीमार पशुओं की देखभाल करने वाले व्यक्ति को भी स्वस्थ पशुओं के बाड़े से दूर रहना चाहिए।

• इस रोग का कोई निश्चित उपचार नहीं है। अतः रोगी पशु में दूसरे जीवाणु संक्रमण को रोकने के लिए चिकित्सक की सलाह पर एंटीबायोटिक के टीके लगाने चाहिए।

• मुंह में बोरो-गिलिसरीन तथा खुरों में किसी एंटीसेप्टिक लोशन का प्रयोग किया जा सकता है।

• मुँह के छाले को 1 प्रतिशत फिटकरी के पानी में घोलकर दिन में तीन बार धोना चाहिए। प्रभावित पशुओं के मुंह और पैरों को 1 प्रतिशत पोटैशियम परमैंगनेट ($KMnO_4$) एंटीसेप्टिक माउथ वॉश से दिन में 3-4 बार धोना चाहिए।

• रोगग्रस्त पशु के पैर को नीम एवं पीपल के छाल का काढ़ा बना कर दिन में दो से तीन बार धोना चाहिए।

• संक्रमित पशुओं को मुलायम सुपाच्य एवं पूर्ण आहार दिया जाना चाहिए, जिससे खनिज एवं विटामिन की मात्रा पूर्ण रूप से मिलती रहे।

खुरपका-मुंहपका रोग का रोकथाम तथा बचाव

• बछड़ों के प्रभावित माताओं को दूध पिलाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए और उन्हें प्रभावित जानवरों का दूध नहीं पिलाना चाहिए।

• बीमार पशुओं के आवागमन पर रोक लगा देना चाहिए। रोग से प्रभावित क्षेत्र से पशु नहीं खरीदना चाहिए। पशुशाला को साफ-सुथरा रखना चाहिए।

• इस बीमारी से मरे हुए पशु के शव को खुला न छोड़कर जमीन में गहरे गड्ढे मे गाड़ना चाहिए।

• (2 प्रतिशत), सोडियम कार्बोनेट (4 प्रतिशत) और साइट्रिक एसिड (0.2 प्रतिशत) का उपयोग करके फर्श, परिसर और सभी संक्रमित सामग्रियों को कीटाणुरहित करने की सलाह दी जाती है।

• पशुओं के बाड़े के आसपास चूने का पाउडर छिड़कना चाहिए।

• टीकाकरण ही इस बीमारी से बचाव के लिए सर्वोत्तम है। बच्छे, बच्छियाँ में पहला टीका 3 माह की आयु में, पहली खुराक के 3-4 सप्ताह बाद बूस्टर खुराक दी जाती है। पहले यह टीका साल में दो बार लगाया जाता था लेकिन अब यह टीका साल में केवल एक ही बार लगाया जाता है।

निष्कर्ष

रोग की घटनाओं में कमी आने तक नियमित अंतराल पर बार-बार अतिसंवेदनशील पशुओं को बड़े पैमाने पर टीकाकरण द्वारा नियंत्रण किया जा सकता है। इससे देश में इस बीमारी के धीरे-धीरे उन्मूलन का मार्ग प्रशस्त होगा। टीकाकरण के साथ-साथ रोग की निगरानी सहित जैव स्वच्छता उपाय भी खुरपका-मुंहपका नियंत्रण कार्यक्रम के कार्यान्वयन से रोग की घटनाओं में भारी कमी आई है। इस संक्रमित रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए विशेष रूप से सीमावर्ती क्षेत्रों समय पर रोग की जानकारी, समय पर सूचना साझा करना और साथ ही नियंत्रण उपायों को अपनाने सहित क्षेत्रीय सहयोग की आवश्यक है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

ओस्टर मशरूम की उत्पादन तकनीक

राम प्रवेश प्रसाद[1*], प्रमिला[2] एवं कृष्ण कुमार[3]

[2एवं3] पं. दीनदयाल उपाध्याय उद्यान एंव वानिकी महाविद्यालय, पिपराकोठी, पूर्वी चंपारण

[1]डा. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर

पत्राचारकर्ता: rpprasad79@gmail.com

परिचय

भारतवर्ष के अधिकतर उत्तरी भू-भाग में श्वेत बटन,ओस्टर मशरूम की खेती की जाती है, यहाँ कुछ महीनों के लिये तापमान 25-40 डिग्री सेल्सियस के बीच रहता है। उत्तरी भारत के मौसमी (सीजनल) मशरूम उत्पादक पहले केवल श्वेत बटन मशरूम पर ही निर्भर थे और शरद ऋतु में श्वेत बटन मशरूम की एक फसल लेने के बाद वे अपने उत्पादन कार्य को बंद कर देते थे, तापमान में वद्धि के कारण वर्ष भर मशरूम उत्पादन कार्य जारी नहीं रख पाते हैं। कुछ मशरूम उत्पादक ढींगरी मशरूम की एक-दो फसलें लेने का प्रयास करते हैं। यदि मशरूम उत्पादक दूधिया मशरूम को वर्तमान फसल चक्र में शामिल कर लें तो अपने मशरूम उत्पादन काल को बढ़ा सकते हैं तथा वर्ष भर मशरूम उत्पादन से स्वरोजगार प्राप्त कर सकते हैं। राजेन्द्र दूधिया मशरूम-1 का वैज्ञानिक नाम ट्राइकोलोमा गिगेंसियम है। इसे चयन विधि द्वारा विकसित किया गया हैं। दूधिया मशरूम का आकार व रूप श्वेत बटन मशरूम से मिलता-जुलता है। श्वेत बटन मशरूम की अपेक्षा दूधिया मशरूम का तना अधिक मांसल, लम्बा व आधार काफी मोटा होता है, कैप बहुत ही छोटी तथा जल्दी खुलने वाली होती है। दूधिया मशरूम की टिकाऊ क्षमता (तुड़ाई के बाद भण्डारण करने की अवधि) अधिक होती है। माँग कम होने पर इस मशरूम की तुड़ाई तीन-चार दिन देर से भी करने पर गुणवता में कमी नहीं आती है। इस मशरूम की खेती अप्रैल सें अक्टूबर तक कर सकतें हैं।

इस मशरूम में पायें जानें वाले पौष्टिक तत्वों को सारणी संख्या -1 में दर्शाया गया हैं

सारणी -1 राजेन्द्र दूधिया मशरूम-1 में पायें जानें वालें पोषक तत्व (प्रतिशत)

जल	89.44
प्रोटीन	33.24
कार्बोहाईड्रेट	27.55
वसा	2.97
तन्तु	12.62
खनिज	8.30
नमी	8.92
अन्य अनुप्लब्ध कार्बोहाईड्रेट	6.40

क. जलवायु

दूधिया मशरूम की खेती के लिये अधिक तापमान की आवश्यकता होती है। कवक जाल फैलाव के लिये 25-35^{o} सेल्सियस तथा 80-90 प्रतिशत नमी की आवश्यकता होती है। केसिंग परत बिछाने से लेकर फसल लेने तक तापमान 30-35^{o} सेल्सियस तथा नमी 80-90 प्रतिषत होनी चाहिए। अधिक तापमान (30-40^{o} सेल्सियस) होने पर भी यह मशरूम पैदावार देती रहती है।

ख. माध्यम का चुनाव

ढींगरी मशरूम की भांति, इस मशरूम को भी विभिन्न कृषि

फसलों से प्राप्त अवशेषों पर आसानी से उगाया जा सकता है जैसे गेंहूँ का भूसा, पुआल, ज्वार, बाजरा व मक्का की कड़वी, गन्ने की खोई आदि। माध्यम नया व सूखा होना चाहिए और बरसात में भीगा न हो। इस प्रकार उपलब्ध्ता के अनुसार कोई एक माध्यम चुन लें। इस मशरूम की खेती के लिये भूसा या पुआल का इस्तेमाल अधिक किया जा रहा है।

ग. माध्यम का उपचार

माध्यम को हानिकारक सूक्ष्मजीवियों से मुक्त कराने तथा दूधिया मशरूम की वृद्धि हेतु उपयुक्त बनाने के लिये, इसे उपचारित करना आवश्यक होता है। चुने हुए माध्यम का गर्म पानी या रासायनिक विधि से उपचार कर सकते हैं।

(i) गर्म पानी उपचार विधि

इस विधि के अनुसार भूसा या धान के पुआल की कुट्टी को टाट के छोटे बोरे में भर इसे साफ पानी में अच्छी प्रकार से कम से कम 6-8 घण्टे तक डुबोकर रखते हैं ताकि भूसा या पुआल अच्छी तरह से पानी सोख ले। इसके बाद इस गीले भूसे से भरे बोरे को उबलते हुए गर्म पानी में 40 मिनट तक डुबोकर रखते है। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि भूसा डुबोने के बाद पानी 40 मिनट तक उबलता रहना चाहिए, तभी माध्यम का उपचार सफल हो सकता हैं। इसके बाद भूसे को गर्म पानी से निकाल कर साफ फर्श पर फैला दें ताकि अतिरिक्त पानी निकल जाये तथा भूसा ठंडा हो जाये। भूसा डालने से पहले फर्श को धोकर उस पर 5 प्रतिशत फार्मेलीन के घोल (50 मि0ली0/लीटर पानी) का छिड़काव करें। इस समय भूसे में पानी की मात्रा (नमी) 65-70 प्रतिशत होनी चाहिए। इस स्थिति का अंदाजा भूसे को मुठ्ठी में कसकर दबाकर लगाया जा सकता है। दबाने पर यदि भूसे से पानी न निकले और हथेली मामूली सी नम हो जाये तो समझना चाहिये कि भूसे में नमी ठीक है। इस प्रकार उपचारित माध्यम बीजाई के लिये तैयार है।

(ii) रासायनिक उपचार विधि

गर्म पानी उपचार विधि को लघु स्तर पर अपनाना उचित है परन्तु बड़े स्तर पर यह अधिक खर्चीली साबित होती है। अतः विकल्प के रूप में रासायनिक विधि को अपनाया जा सकता है। रासायनिक उपचार विधि द्वारा माध्यम को उपचारित करने का तरीका निम्नलिखित है।

- किसी सीमेंट के हौद या ड्रम में 90 लीटर पानी लें तथा उसमें 10-12 किलोग्राम भूसा भिगो दें।
- एक बाल्टी में 10 लीटर पानी लें तथा उसमें 7.5 ग्राम बॉविस्टीन व 125 मि.लि. फार्मेलीन मिलायें। इस घोल को ड्रम में भिगोये गये भूसे पर डाल दे तथा ड्रम को पॉलीथीन से ढक्कर उस पर वजन रख दें।
- 12-16 घंटे बाद, ड्रम से भूसे को बाहर निकाल कर साफ फर्श पर फैला दें ताकि भूसे से अतिरिक्त पानी निकल जाये। प्राप्त गीला भूसा बीजाई के लिये तैयार है।

घ. बीजाई करना

ऊपर बताई गई किसी एक विधि से माध्यम (भूसा या पुआल) को उपचारित कर उसमें 10-12 प्रतिशत (सुखे भूसे के वजन के अनुसार) की दर से बीज मिलायें यानि कि एक किलोग्राम गीले भूसे में 120-125 ग्राम बीज मिलाया जाता है और फिर सतह में भी बीजाई की जा सकती है। सतह में बीजाई करने हेतु पहले पॉलीथीन के बैग (15-16 इंच चौड़ा तथा 20-21 इंच उँचा) में एक परत भूसे की बिछायें फिर उसके उपर बीज बिखेर दें और उपर से फिर भूसे की परत डालें तथा फिर बीज डालें। दो परतों के बीच का अंतर लगभग 3-4 इंच होना चाहिए। इस प्रकार सतह में बीजाई की जा सकती है। बैग में करीब 4-5 किलोग्राम गीला माध्यम (उपचारित) भरा जाता है। बीजित बैगों को एक अंधेरे कमरे में रख दें तथा लगभग 15-20 दिन तक 25-35^{0} सेल्सियस तापमान तथा 80-90 प्रतिशत नमी बनायें रखें।

ड.. आवरण मिश्रण बनाना व परत बिछाना

बीजाई किये गये बैगों में 15-20 दिनों में बीज भूसे में फैल जाता है तथा भूसे पर सेफद फफूँद दिखाई देती है। ऐसी अवस्था केसिंग परत चढ़ाने के लिये उपयुक्त समझी जाती है। आवरण मिश्रण, आवरण करने के एक सप्ताह पहले तैयार करते हैं। आवरण मिश्रण तैयार करने के लिये 3/4 भाग दोमट मिट्टी व 1/4 भाग बालू मिट्टी को मिलायें। अब इस मिश्रण को 10 प्रतिशत फामेंलीन (100 मि.ली./लीटर पानी) व 0.1 प्रतिशत बॉविस्टीन के घोल (1 ग्राम/लीटर पानी) से गीला कर उपर से पॉलीथीन शीट से आठ दिन के लिये ढक दें। आवरण करने के 24 घण्टे पूर्व ही आवरण मिश्रण से पॉलीथीन हटायें तथा मिश्रण को बेलचे से उलट-पलट दें ताकि फार्मेलीन की गंध निकल जाये। इस प्रकार तैयार आवरण मिश्रण की 2-3 सें.मी. मोटी परत बीज फैले हुए बैग के मुंह को खोलकर, सतह को चैरस कर बिछा देते हैं। इस

दौरान तापमान 30-35^0 सेल्सियस तथा नमी 80-90 प्रतिशत बनाये रखते हैं। लगभग 10-12 दिनों में कवक जाल (बीज के तंतु) आवरण मिश्रण में फैल जाता हैं।

च. फसल प्रबंधन

आवरण मिश्रण में कवक जाल फैलने के बाद, बैगों पर प्रतिदिन पानी का छिड़काव किया जाता है, कमरे में ताजी हवा दी जाती है तथा 30-35^0 सेल्सियस तापमान व 80-90 प्रतिशत नमी बनाये रखी जाती है, जिससे 3-5 दिनों में मशरूम कलिकायें निकलना प्रारम्भ हो जाती हैं, जो लगभग एक सप्ताह में पूर्ण मशरूम का रूप ले लेती हैं। ढींगरी मशरूम की भांति इस मशरूम की बढ़वार के लिये भी प्रकाश की आवश्यकता होती हैं।

छ. तुड़ाई, पैकिंग तथा परिवहन

- दूधिया मशरूम की कैप जब 5-6 सें.मी. मोटी हो जाये तो इसे परिपक्व समझना चाहिये और अंगूठे व उँगली की सहायता से घुमाकर तोड़ लेना चाहिए।
- मशरूम तने के निचले भाग को जिसमें, मिट्टी लगी होती है को काट दिया जाता है और मशरूम को छिद्रित पॉलीथीन बैग में पैक किया जाता है। कुचली हुई बर्फ से भरे पॉली पाउच को कागज में लपेटकर ट्रे/टोकरी में रखा जाता है, फिर उचित वायु संचार के लिए पर्याप्त छिद्रों वाली पतली पॉलीथीन शीट से ढक दिया जाता है। पहले से पैक किए गए पाउच (250 या 500 ग्राम) को परिवहन की जाने वाली मात्रा के आधार पर ट्रकों, बसों में सड़क मार्ग से ले जाया जा सकता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विधि द्वारा खेती कर किसान भाई अत्यधिक मुनाफा कमा सकते है और अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार कर सकते है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

भारत में भूमि अभिलेखों का आधुनिकीकरण

कुमारी अंजना गुप्ता* एवं आर. एल. राऊत

कृषि विज्ञान केंद्र, बालाघाट

पत्राचारकर्ता: blogger.sp2020@gmail.com

परिचय

डिजिटल इंडिया भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम (DILRMP), जिसे पूर्व में राष्ट्रीय भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण के नाम से जाना जाता था, देश में भूमि अभिलेखों की गुणवत्ता में सुधार करने, उन्हें अधिक सुलभ बनाने और सरकार द्वारा गारंटीकृत अधिकार की ओर बढ़ने की माँग करता है। दरअसल इस वर्ष इस योजना के कार्यान्वयन का एक दशक पूरा हो गया है और अब इसकी समीक्षा की जानी भी आवश्यक हो गई है। इस लेख में DILRMP (Digital India Land Records Modernization Programme) योजना तथा संबंधित चुनौतियों को विस्तार से उल्लेखित किया गया है।

DILRMP क्या है?

- डिजिटल इंडिया भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम अगस्त 2008 में भारत सरकार द्वारा शुरू किया गया था।
- इसका मुख्य उद्देश्य भूमि अभिलेखों के प्रबंधन को आधुनिकीकरण, भूमिध्संपत्ति विवादों के दायरे को कम करने, भूमि अभिलेख रखरखाव प्रणाली में पारदर्शिता बढ़ाने और देश में अचल संपत्तियों के लिये अंततः गारंटीकृत निर्णायक अधिकार की ओर बढ़ने की सुविधा प्रदान करना है।
- इस कार्यक्रम के प्रमुख घटक भूमि स्वामित्त्व का फेर-बदल, मानचित्रों का डिजिटलीकरण तथा पाठ्यचर्या और स्थानिक डेटा के एकीकरण, सर्वेक्षणए पुनः सर्वेक्षण और मूल भूमि के रिकॉर्ड सहित सभी भूमि अभिलेखों का कंप्यूटरीकरण करना है।

DILRMP का क्रियान्वयन

- भूमि स्वामित्त्वाधिकार एक दस्तावेज है, जो भूमि पर स्वामित्त्व के निर्धारित करने में मदद करता है और यह संपत्ति पंजीकरण प्रक्रिया के पूर्ण कंप्यूटरीकरण और सभी भूमि अभिलेखों के डिजिटलीकरण के माध्यम से हासिल की जा सकती है।
- DILRMP को सभी राज्यों द्वारा अंतर-प्रगति के साथ लागू किया जा रहा है।
- आँकड़ों के मुताबिक दो राज्य (कर्नाटक और ओडिशा) और तीन केंद्र शासित प्रदेशों ने भूमि अभिलेखों का 100% कम्प्यूटरीकरण का लक्ष्य पूरा कर लिया है, वहीं चार राज्य अभी तक इस प्रक्रिया को शुरू ही नहीं कर पाए हैं, जबकि शेष अन्य राज्यों ने रिकॉर्ड 80-90% तक कम्प्यूटरीकृत किया है।
- उन्नीस राज्योंध्केंद्रशासित प्रदेशों ने अधिकारों के डिजिटल हस्ताक्षरित रिकॉर्ड (RORs) जारी करना शुरू कर दिया है, इन रिकॉर्ड से ज्ञात होता है कि जमीन का अधिकार भूमि मालिक द्वारा कैसे प्राप्त किया जाता हैं।
- इन राज्यों ने RORs को कैडस्ट्रल मैप्स (क्षेत्र का रिकॉर्ड, स्वामित्त्व और जमीन के मूल्य) से जोड़ना शुरू कर दिया है।
- इनमें से तीन राज्यों (गोवा, ओडिशा और त्रिपुरा) ने लगभग इस प्रक्रिया को पूरा कर लिया है। हालाँकि, योजना के कुछ अन्य घटकों पर प्रगति धीमी रही है, जिसमें स्वामित्त्व के हस्तांतरण का रिकॉर्ड केवल 50% गाँवों में ही कम्प्यूटरीकृत किया गया है।
- इसके अलावा, केवल 21% गाँवों ने (RORs) मानचित्रों के वास्तविक समय को अद्यतन करना शुरू कर दिया है। इससे पता चलता है कि रिकॉर्ड डिजिटलीकृत तो किये गये हैं किंतु उन्हें अद्यतन नहीं किया गया है।
- मानचित्र भूमि अभिलेखों के एक महत्त्वपूर्ण घटक होते हैं क्योंकि वे संपत्ति और स्वामित्त्व की सटीक सीमाओं का विवरण प्रदान करते हैं। हालाँकि, केवल 48% कैडस्ट्रल मानचित्रों को डिजिटलीकृत किया गया है।
- गाँवों के 45% सर्वेक्षण और पुनः सर्वेक्षण के काम में स्थानिक डेटा का प्रयोग किया जाता है, जो स्थानीय रिकॉर्ड अपडेट करने में मदद करता है। हालाँकि, कुल गाँवों में से केवल 9% में ही यह कार्य किया गया है।

संबंधित प्रमुख चुनौतियाँ

1. इस योजना के अंतर्गत भूमि अभिलेखों का डिजिटलीकरण तो किया गया है, लेकिन भूमि स्वामित्त्व संबंधित समस्यायों का कोई उल्लेख नहीं किया है।

2. सर्वविदित है कि भारत में भूमि अभिलेख अस्पष्ट हैं और वे स्वामित्त्व की गारंटी नहीं देते हैं, इस तरह के अस्पष्ट भूमि विवाद विभिन्न कारणों से हैं, जो निम्नलिखित हैं

- सबसे पहले, भारत में हमारे पास पंजीकृत लेन-देन कार्यों की एक प्रणाली है, न कि भूमि स्वामित्त्वाधिकार।
- संपत्ति स्थानांतरण अधिनियम, 1882 के अनुसार एक अचल संपत्ति (या भूमि) के अधिकार को केवल एक पंजीकृत दस्तावेज द्वारा स्थानांतरित या बेचने का कार्य किया जा सकता है।
- ये दस्तावेज पंजीकरण अधिनियम, 1908 के तहत पंजीकृत हैं। इसलिये हस्तांतरण तो पंजीकृत हो जाता है लेकिन भूमि स्वमित्त्वाधिकार नहीं।
- इसका तात्पर्य यह है कि संपत्ति का हस्तांतरण हमेशा स्वामित्त्व की गारंटी नहीं दे सकते हैं, क्योंकि इससे पूर्व हस्तांतरण को चुनौती दी जा सकती है।
- दूसरा, भूमि पर स्वामित्त्व विभिन्न विभागों द्वारा बनाए गए कई दस्तावेजो के माध्यम से प्राप्त किया जाता है, जिससे उन तक पहुँचना बोझिल हो जाता है। उदाहरण के लिये - पंजीकरण विभाग में बिक्री कार्य, नक्शा सर्वेक्षण विभाग तथा संपत्ति कर रसीद राजस्व विभाग द्वारा संग्रहीत किये जाते हैं।
- इसके अलावा, ये विभाग सिलो में काम करते हैं और डेटा को समयृ पर अपडेट नहीं करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप विसंगतियाँ उत्पन्न होती हैं। इस तरह संपत्ति के एक टुकड़े पर स्वामित्त्व का दावा प्राप्त करने के लिये किसी को कई वर्षों तक दस्तावेजों का संग्रह करना पड़ता है, जो देरी का कारण बनता है।
- तीसरा, संपत्ति पंजीकरण की लागत अधिक है और इसलिये लोग लेन-देन पंजीकरण की प्रक्रिया से बचते हैं। उल्लेखनीय है कि बिक्री के लिये खरीदार को पंजीकरण शुल्क के साथ एक स्टांप ड्यूटी का भुगतान करना पड़ता है। भारत के राज्यों में स्टांप ड्यूटी की दरों में भिन्नता है।
- चैथा, पंजीकरण अधिनियम, 1908 के तहत सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण जैसे- लेन-देन के लिये संपत्ति का पंजीकरण अनिवार्य नहीं है, जब संपत्ति एक वर्ष से भी कम समय के लिये ली गई हो और संपत्ति का बँटवारा किया गया हो।

3. इस प्रकार कई बार संपत्ति के बँटबारे को दर्ज नहीं किया जाता है। अतः ये संपत्ति के स्वामित्त्व को सही ढंग से प्रतिबिंबित नहीं करते हैं साथ ही यह अक्सर स्वामित्त्व से संबंधित मुकदमेबाजी में फँस जाता है।

4. अतः अस्पष्ट भू-स्वामित्त्व अधिकार कई मोर्चों पर विकास में बाधा डालते है। उदाहरण के लिये ग्रामीण इलाकों में छोटे और सीमांत किसान, जो औपचारिक भूमि अधिकार नहीं रख सकते हैं, वे संस्थागत क्रेडिट तक पहुँचने में असमर्थ रहते हैं।

5. शहरी क्षेत्रों में विवादित भू-स्वामित्त्व अधिकार, अचल संपत्ति लेन-देन में पारदर्शिता की कमी का कारण बनता है। इस आधार पर जमीन पर बनाए गए किसी भी आधारभूत ढाँचे को भविष्य में संभावित रूप से चुनौती दी जा सकती है, जिसने निवेश को जोखिम भरा बना दिया।

6. इसके अलावा, स्मार्ट शहरों और AMRUT (Atal Mission for Rejuvenation and Urban Transformation) मिशन के अंतर्गत, शहर संपत्ति करों और भूमि आधारित वित्त पोषण के माध्यम से अपना राजस्व बढ़ाने की कोशिश कर रहे हैं। अतः इसके लिये स्पष्ट भू-स्वामित्त्व अधिकार की व्यवस्था प्रदान करने की जरुरत है।

निष्कर्ष

- हालाँकि, DILRMP का लक्ष्य निर्णायक भू-स्वामित्त्व अधिकार की ओर बढ़ना है, लेकिन यह उपर्युक्त मुद्दों को केवल आंशिक रूप से संबोधित करता है। अस्पष्ट भू-स्वामित्त्व अधिकार के मुद्दों को हल करने के लिये सरकार ने निर्णायक स्वामित्त्वाधिकार की ओर एक कदम बढ़ाया है।
- इस प्रणाली के तहत सरकार स्वामित्त्व विवादों के मामले में गारंटीकृत भू-स्वामित्त्व अधिकार और मुआवजा प्रदान करती है।
- हालाँकि, भारत में ऐसी प्रणाली को अपनाने के लिये कई उपायों की आवश्यकता होगी। इसके लिये पंजीकृत संपत्ति अधिकार की एक प्रणाली को स्वामित्व के प्राथमिक सबूत के रूप में विकसित करना होगा।
- साथ ही, मौजूदा सभी भूमि अभिलेखों को यह सुनिश्चित करने हेतु अद्यतन किया जाना चाहिये कि वे किसी भी प्रकार के भार से मुक्त हैं।
- इसके अलावा, भूमि अभिलेखों की जानकारी जो वर्तमान में कई विभागों से जुटानी होती है, को समेकित करना होगा।

संदर्भ

- https://www.india.gov.in/atal-mission-rejuvenation-and-urban-transformation-amrut
- https://dolr.gov.in/programmes-sche-mes/ dilrmp-2/
- https://en.wikipedia.org/wiki/Digital_ India_Land_ Record_Modernization_Programme

❖❖

ISSN No. 2583-3316

बलराम एप की उपयोगिता

कुमारी अंजना गुप्ता* एवं आर. एल. राऊत

कृषि विज्ञान केंद्र, बालाघाट

पत्राचारकर्ता: blogger.sp2020@gmail.com

परिचय

किसानों को खेती की बारीकी सिखाने के लिए किसानों को खेती सम्बंधित प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से कई सरकारी योजनाओं को चलाया जा रहा है। ऐसी ही मध्यप्रदेश (Madhya Pradesh) में किसानों को खेती के लिए जागरुक करने हेतु बलराम ऐप लांच किया गया है। इस एप की मदद से किसानों को खेती की सही तौर-तरीके सिखाए जाएंगे। बलराम एप से सम्बंधित महत्वपूर्ण व अन्य जानकारी निम्नलिखित है।

बलराम एप क्या है?

मध्यप्रदेश के जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय के द्वारा बलराम एप का संचालन किया जाता है। इस एप को इंडो-जर्मन के संयुक्त प्रोजेक्ट के अंतर्गत लॉन्च किया गया है। एप की मदद से किसानों को खेती सम्बंधित महत्वपूर्ण जानकारी दी जाएगी। किसानों को मिट्टी को स्वस्थ रखने से लेकर कृषि के आधुनिक यंत्रों तक की जानकारी बलराम एप की मदद से दी जाएगी। राज्य सरकार अलग-अलग चरणों में यह एप प्रदेश में लॉन्च करेगी। फिलहाल राज्य के 10 जिलों में इसे लॉन्च किया गया है।

बलराम एप का उद्देश्य

खेती-किसानी की सही समझ न होने की वजह से किसानों की फसलों को काफी नुकसान हो रहा है। अधिक मात्रा में इस्तेमाल हो रहे कीटनाशकों के कारण मिट्टी की उर्वरक क्षमता कम हो रही है। ऐसे में मध्यप्रदेश में बलराम एप लॉन्च किया गया, इस एप का उद्देश्य किसानों को खेती सम्बंधित सही जानकारी देना है। इस एप की मदद से किसान सीधा कृषि वैज्ञानिकों से अपने सवाल पूछ पाएंगे। पहले चरण में प्रदेश के सागर, रीवा, शहडोल, जबलपुर, सिंगरौली, मंडला, बालाघाट, कटनी, दमोह और छतरपुर जिले में बलराम एप लॉन्च किया गया है।

बलराम एप के लाभ

- इस एप पर किसानों को कृषि सम्बंधित महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होगी।
- राज्य सरकार, बलराम एप पर खेती-किसानी से जुडी एडवाइजरी भी जारी करेगी।
- किसान, कृषि वैज्ञानिकों से सीधे अपने सवाल पूछ पाएंगे।
- एप में प्रदेश के जिले, विकासखंड और ब्लॉक स्तर पर सभी जानकारियाँ उपलब्ध होंगी।
- किसान हिंदी और अंग्रेजी दोनों में से किसी भी भाषा का चयन कर एप का इस्तेमाल कर सकता है।
- पहले चरण में करीब 25 हजार किसानों को इस एप से जोड़ने का लक्ष्य रखा है।
- एप में आस-पास के मौसम से सम्बंधित जानकारी में प्राप्त की जा सकेगी।
- प्रदेश में भारी बारिश के कारण किसानों के फसलों को भारी नुकसान होता है, एप की मदद से किसान मौसम से होने वाले फसल नुकसान से बच सकते हैं।

बलराम एप की विशेषतायें

किसानो की कृषि से जुडी हर तरह की समस्या के समाधान के उदेश्य से बलराम एप को तैयार किया गया है साथ ही किसानों को मिलने वाली हर सुविधा को ध्यान में रखते हुए इसे डिजाइन किया गया है। मीडिया रिपोर्ट से मिली जानकारी के अनुसार, इंडो जर्मन तकनीक के कंबाइन प्रोजेक्ट के तहत बलराम एप्लीकेशन के संचालन की जिम्मेदारी जवाहरलाल नेहरू कृषि यूनिवर्सिटी को सौंपी गई है। इसकी सहायता से किसान अपने खेत की मिट्टी की सेहत के बारे में जान सकता है। किसानों के लिए यह एप बेहद उपयोगी है। इस एप की मदद से कृषि एडवाइजरी मिल जाएगी, साथ ही application पर कृषि विशेषज्ञ भी सुझाव देंगे। एप्लीकेशन को हिंदी और अंग्रेजी दो भाषाओं में इस्तेमाल किया जा सकता है। किसान अपनी इच्छा अनुसार हिंदी या अंग्रेजी का प्रयोग कर सकते हैं।

बलराम एप्लीकेशन को मिट्टी की सेहत को बरकरार रखने और कृषि कार्यों में आ रहीं समस्याओं के समाधान के लिए लॉन्च किया गया है। राज्य में पहली बार किसान अपने फोन के माध्यम से ही खेती से जुड़ी एडवायजरी ले सकेंगे और समस्याओं के समाधान के लिए सीधे कृषि विशेषज्ञों से भी बात कर सकेंगे। इस एप्लीकेशन में किसानों की सुविधा के लिए अंग्रेजी और हिंदी दो ही भाषाओं का विकल्प दिया गया है। किसान दोनों में ही भाषा में सवाल पूछकर जानकारी हासिल कर सकते हैं।

21वीं सदी में भारत तेजी से बदल रहा है हर क्षेत्र में डिजिटल क्रांति देखने को मिल रही है। कृषि क्षेत्र में भी डिजिटल क्रांति लाने के लिए लगातार कई अहम कदम उठाए जा रहे हैं। इसी कड़ी में अब कई मोबाइल एप्लीकेशन को भी लॉन्च किया गया है, जिनसे जुड़कर किसानों को सही समय पर सही कृषि कार्य के लिए एडवायजरी मिल रही है और कई एप्स तो मोबाइल पर ही मौसम से संबंधित अपडेट्स और कृषि विशेषज्ञों की खास सलाह भी देते हैं।

बलराम एप डाउनलोड डाउनलोड करने की प्रक्रिया

कोई भी किसान बेहद आसानी से इस एप को गूगल प्लेस्टोर से डाउनलोड कर सकता है।

- बलराम एप को डाउनलोड करने के लिए आपको सबसे पहले गूगल प्ले स्टोर पर जाना होगा।
- सर्च बॉक्स में टाइप करें बलराम एप (Balram App), जिसके बाद आपकी स्क्रीन पर बलराम एप को इनस्टॉल करने का विकल्प आ जाएगा।
- इनस्टॉल पर क्लिक कर इस एप को अपने स्मार्ट फोन में डाउनलोड कर सकते हैं।

संदर्भ

- https://mp/madhya-pradesh-government-launched-balram-app-for-farmers-for-information-check-details/
- https://apps/details?id= app. balramapp. com & hl=en_US

❖❖

ISSN No. 2583-3316

औषधीय गुण व आय का उत्तम श्रोतः आंवला की वैज्ञानिक खेती

कुलदीप कुमार शुक्ला[1*], लवकुश पाण्डेय[2], प्रद्योत कुमार नायक[3], गौतम प्रताप सिंह[4] एवं आशीष आनंद[5]

[1,3,4एवं5]ओडिशा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, भुबनेश्वर

[2]आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज

पत्राचारकर्ता: shuklahort7854@gmail.com

परिचय

आंवला (*Emblica officinalis*) एक महत्वपूर्ण, बहुउपयोगी औषधीय फल है, जो की युफोरबिएसी परिवार का सदस्य है। आंवला को भारतीय गूज़बैरी, अमरफल, धात्रीफल, अमला भी कहा जाता है। इसकी खेती सामान्य शुष्क इलाकों में बड़ी सफलता से की जा सकती है। आंवले का उत्पत्ति स्थान उष्णकटिबंधीय क्षेत्र के दक्षिण और पूर्वी एशिया देशो को माना जाता है तथा मुख्य रूप से भारतीय उपमहाद्वीप या इंडोमलाया देश है। आंवला की खेती विश्व के विभिन्न देशो में भी की जाती है,जैसे क्यूबा, अमेरिका, पाकिस्तान, श्रीलंका, मलेशिया और वेस्टइंडीज आदि।

भारत में आंवला की खेती विभिन्न शुष्क और अर्धशुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में जैसे-उत्तर प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, हरियाणा, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु की जाती है। भारत में उच्य गुणवत्ता वाला आंवला की खेती और मुख्य उत्पादक उत्तर प्रदेश राज्य के प्रतापगढ़, प्रयागराज और अयोध्या जिला हैं। यहाँ के आंवले की लोकप्रियता न केवल देश और प्रदेश बल्कि विदेश में भी काफी चर्चित है, भारत में आंवले की गुणवत्ता और उत्पादकता के कारण ही विश्व में अपना अलग ही स्थान स्थापित कर चुका है।

आंवला में उपस्थित पोषक तत्व एवं उपयोग

पोषक तत्व	आंवला में उपस्थित पोषक तत्व की मात्रा
फल का भार (ग्राम)	29.391
गुदे का भार (ग्राम)	26.231
गुदे का भार (%)	92.3
बीज का भार (%)	7.60
कुल घुलनसील ठोस पदार्थ	8.62
शुगर	7.32
प्रोटीन	2.187
कार्बोहाईड्रेट	7.113
विटामिन सी	560
लौह तत्व (मिलीग्राम)	1.2
कैल्शियम (%)	0.05

आंवले का उपयोगी गुण

आंवले को दैनिक सेवन करने से शरीर स्वस्थ रहता है क्योंकि आंवले का फल पोषक तत्व एवं औषधीय गुणों से भरपूर होता है। इसमें विटामिन सी प्रचुर मात्रा में होती है, जो हमे विभिन्न प्रकार के रोगों से प्रतिरोधक शक्ति प्रदान करती है। इससे विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ बनाये जाते है जैसः अचार, मुरब्बा, जैम, चटनी, स्कवेश, कैंडी आदि हैं। वर्तमान समय में इसका अत्यधिक उपयोग सौंदर्य प्रसाधन के औद्योगीकरण में किया जाता है जैसे आंवला तेल व शैंपू और विभिन्न प्रकार की बिमारी जैसे अनीमिया, डायरिया, दांतों में दर्द वा खून का बहना, स्कर्वी, बुखार और बालों का झड़ना एवं बालों के सफेद होने से रोकने के लिए मुख्यता आयुर्वेदिक औषधियाँ, त्रिफला चूर्ण एवं च्यवनप्राश बनाने में व्यावसायिक तौर पर किया जाता है।

जलवायु एवं भूमि

आंवला को सामान्यता सभी प्रकार की जलवायु और मिट्टी में उगाया जा सकता है, लेकिन अत्यधिक उत्पादन और उत्पादकता के लिए उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र उपयुक्त है और साथ ही साथ इसे उष्णकटिबंधीय, शुष्क और वर्षा आधारित अर्धशुष्क जलवायु में भी सफलतापूर्वक उत्पादन किया जा सकता है। इसकी खेती के लिए उत्तम जल निकास एवं पोषक तत्वों से भरपूर बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है, जिसका ph मान 6.5 से 9.5 के बीच होना चाहिए। इस फल की प्रमुख विशेषताए ये है, कि ये हल्की अम्लीय और लवणीय/सोडिक मिट्टी उगाया जा सकता है।

आंवले की उन्नत किस्मे

आंवला की अधिकांश किस्में को चयन के द्वारा विकसित गया है, जो निम्नवत इस प्रकार से है; जैसे बनारसी, फ्रांसिस और चकइया आदि।

आंवला की महत्वपूर्ण उन्नतशील किस्में और विवरण निम्नवत

किस्मों का नाम	चयन	संस्थान द्वारा विकसित	लक्षण
एनए.7 -	फ्रांसिस (नीलम)	ANDUAT	कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 9.45 ब्रिक्स, अम्लता 2.15ः और विटामिन C527.00 Mg100g फल का गुदा यह फल परिगलन रहित किस्म है।
नरेन्द्र आँवला -4 (कंचन)	चकइया	ANDUAT	कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 9.5 ब्रिक्स, अम्लता 2.11% और विटामिन -C422.00 Mg100g फल का गुदा। यह देर से परिपक्व होती है और साथ ही परिगलन से मुक्त किस्में है।
नरेन्द्र आँवला -5(कृष्णा)	बनारसी	ANDUAT	कुल घुलनशील ठोस 10.0 ब्रिक्स, अम्लता 2.32 और विटामिन -C 549.20 Mg100g फल का गुदा।
नरेन्द्र आँवला -6			यह मध्यकाल की किस्में है, जो सामान्यतः नवम्बर से मध्य दिसंबर तक होती है, फल का औसतन भार 38.8 होता है।
नरेन्द्र आँवला -9			यह शीघ्र पकने वाली किस्म है, यह अक्टूबर से नवम्बर माह तक तैयार हो जाती है, इसमे विटामिन सी मात्रा अधिक होती है।
नरेन्द्र आँवला -25			यह किस्म मुख्यतः मुरब्बे के लिए उपयोगी है। और कल जल्दी परीपक्व होते है।
नरेन्द्र आँवला -26			यह किस्म अच्छी गुणवत्ता के साथ -2 अचार और विभिन्न खाद्या पदार्थो बनाने के लिए उपयोगी।
चकइया			देर से पकने वाली किस्म है और साथ ही साथ भण्डारण की गुणवत्ता अच्छी होती है और अचार बनाने के लिए अत्यधिक उपयुक्त है। इसमे कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 9.5 ब्रिक्सए अम्लता 2.18 प्रतिशत और विटामिन सी 502.00 मिलीग्राम /100 ग्राम फलों का गूदा।
फ्रांसिस			यह फल परिगलन के प्रति अत्यधिक अतिसंवेदनशील है। इस लिए यह बहु उपयोगी नही सिद्ध हुई। इसमे कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 8.24 ब्रिक्स, अम्लता 1.98 Mg/100g प्रतिशत और विटामिन सी 532.56 मिलीग्राम /100 ग्राम फलों का गूदा।
गोमा ऐश्वर्या	एनए-7 (नीलम)	भाकृअनुप-सीआईएएचए बीकानेर	इस किस्मे में रस 47.00 प्रतिशत, गुदा और सीड का अनुपात 26.65, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 10 ब्रिक्स और विटामिन सी सामग्री 554.78 मिलीग्राम /100 ग्राम।

किस्मों का नाम	चयन	संस्थान द्वारा विकशित	लक्षण
आनन्द.1			यह किस्मे मुख्य रूप से आचार और पाउडर के रूप में प्रयोग किया जाता है।
लक्ष्मी.52	फ्रांसिस		अल्प काल में ही फल धारण क्षमता पाई जाती है।

पौधे का प्रवर्धन और नर्सरी तैयार करने की विधि

वानस्पतिक विधि के द्वारा पौधे तैयार करने के से पहले बीज बोकर मूलवृन्त (रूट-स्टॉक) तैयार किए जाते हैं। केंद्रीय बागवानी परिक्षण केंद्र भुबनेश्वर के शोध द्वारा पाया गया है। की यहाँ पर आंवले में प्रवर्धन करने की व्यावसायिक विधि मोडिफाइड रिंग और पैच कलिकायन है। कुछ स्थानों पर साफ्टवुड ग्राफिटंग विधि को व्यावसायि रूप से उपयोगी है।

पौधे रोपित, अंतरण एंव पौधे

आंवला में सामान्यतः पर-परागण होता है, जिससे इसमे स्वयं के पौधे के फूल से परागन नही होता है, इसके फलस्वरूप अधिक उत्पादन के लिए उपयुक्त परागन वाली किस्मे को बाग़ में लगाये, जिससे निषेचन प्राप्त मात्रा में हो सके। केंद्रीय बागवानी परिक्षण केंद्र भुबनेश्वर के शोध द्वारा पाया गया है, कि कम लिंगानुपात वाली किस्में में फल धारण अच्छा होता है, जो किस्मे निम्नवत इस प्रकार है जैसे नरेंद्र आंवला-4 (कंचन), एनए-6, एनए-7 (नीलम) और चकइया आदि, लेकिन शोध में ये भी पाया गया है। सबसे उपयुक्त परागण वाली किस्मे एनए-6 के लिए एनए-7 (नीलम) है।

इसकी खेती के लिए सामान्य अंतरण 10 x 10 फीट पर की जाती है, लेकिन सघन बागवानी के लिए अंतरण 5-6 और 6-6 फीट पौधे के लगाने के लिए 1 घन मीटर आकार के गड्ढा खोदना उपयुक्त गड्ढों को 15-20 दिनों के लिए खुले में छोड़ देना चाहिए। गड्ढों को 15-20 दिनों के लिए सूर्य की रोशनी में छोड़ देना चाहिए फिर गड्ढें में 15-20 किलोग्राम वर्मी कम्पोस्ट खाद या कम्पोस्ट और 1-2 किलोग्राम नीम की खली और 500 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर भली दृभाति मिलाने के उपरान्त गड्ढें को भली भाति भरने के तत्पश्चात 15-20 दिन बाद ही पौधे का रोपण करना चाहिए।

अंतः- फसल (इंटर क्रॉपिंग)

आय की उत्तम श्रोत के लिए अंतः- फसल विधि का उपयोग किसानो के लिए बहुत लाभकारी है, जिससे किसानो को कम समय में आर्थिक लाभ मिलना शुरू हो जाता है और इसके लिए बाग में जल्दी तैयार होने वाली फसलो को लगते है, जैसे पपीता, अदरख, अन्ननास, ड्रैगन फ्रूट आदि।

खाद एंव उर्वरक

आंवला के फल में खाद और उर्वरक मिट्टी की उर्वरता और फल की किस्मे और अंतरण पर निर्भर करती है, पौधे की अच्छे विकास के साथ-साथ फल की उत्पादन, उत्पादकता और गुणवत्ता के लिए खाद एवं उर्वरक की उपयुक्त मात्रा का प्रयोग बहुत ही हितकारी है। खाद एंव उर्वरक मात्रा मृदा परीक्षण के उपरांत ही निर्धारित की जानी चाहिए और साथ-2 आवश्कतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।

पलवार (मल्चिंगद्ध)

फसलो में भूमिगत नमी और उर्वरता को बनाये रखने एवं खरपतवार को नियंत्रित करने के उद्देश से भूमि उपरी सतह को कार्बनिक (फसलो के अवशेष) और आकर्बनिक (विभिन्न प्रकार के पॉलिथीन) से ढकने को पलवार (मल्चिंग) कहते है, जिससे पौधों के पोषक तत्त्व की अवशोषण क्षमता बढ़ जाती और पौधे का विकास अच्छे से होता है।

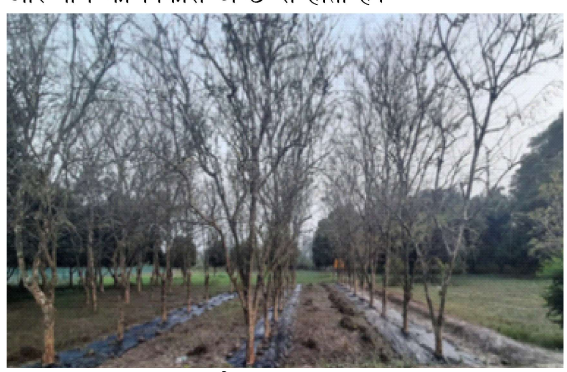

पुष्पण, परागण, फलो की वृद्धि, फलत, उत्पादन एंव भण्डारण

जलवायु के आधार पर आंवले में फूल अलग - अलग समय काल में होता है, जैसे भारत के उत्तरी प्रदेशों में वर्ष में सिर्फ एक बार (मार्च-अप्रैल) आंवले में फूल आते हैं। जबकि दक्षिणी

प्रदेश (जून-जुलाई और फ़रवरी-मार्च) में वर्ष में दो बार फूल और फल आते है, आंवले में दोनों फूल नर व मादा पुष्प एक ही शाखा पर रहते हैं। परन्तु इसमे स्वंयवन्धता के होने के कारण फल कम आते है। जिससे किसानो को आर्थिक रूप में काफी नुकसान होता है अतः अत्याधिक फलत के लिए उपयुक्त (10%) नर परागण पौधों को लगाना पड़ता है। परागण एवं निषेचन के बाद भ्रूण ग्रीष्म ऋतु (अप्रैल से जून) में सुसुप्तावस्थामें रहते है तथा जुलाई महीने में पुनः बाढ़-विकाश शुरू हो जाता है। मार्च-अप्रैल महीने से सुसुप्तावस्था में रहने के बाद फल वर्षा ऋतु में तीव्रता से बढ़ते हैं साथ ही नवम्बर दिसम्बर में परिपक्व हो जाते हैं।

के रूप में दिखाई देते हैं, जो बाद में एक दूसरे के समायोजन

पुष्पण

परागण

फलो की वृद्धि

आंवले के पौधों में लगने वाले प्रमुख कीट, रोग और विकार एवं प्रबंधन

आमतौर पर आंवला रोग मुक्त होता है लेकिन अनुकूल पर्यावरण की स्थिति में कीट रोग और विकार काफी नुकसान पहुंचाते है अतः अच्छी गुणवत्ता के फलोत्पादन के लिए इसका उचित प्रबंधन करना अतिआवश्यक है। आंवले में नुकसान पहुंचाने वाले कुछ प्रमुख कीट, रोगों व विकार के लक्षण और उनसे बचाव का विवरण निम्न प्रकार से है।

रोग एवं नियंत्रण

रस्ट (*Ravenelia emblicae*): आंवला रस्ट एक विनाशक रोग है। यह रोग फलों के आरंभ काल से ही काले छोटे उभार से एक आकृत के रूप में विकसित हो जाते हैं। छोटे -2 धब्बे एक दूसरे से मिलकर फल के काफी क्षेत्र को घेर लेते हैं। इन धब्बों के ऊपर कागजनुमा चमकीली झिल्ली दिखाई देती हैं, जो बाद में फूट कर बाहर आते है जिसके फल खराब दिखते हैं और बाजार में इनकी कीमत नहीं मिलती हैं।

नियंत्रणः घुलनशील गंधक (0.2%) या मंकोज़ेब 75W (0.2%) का छिड़काव 10.12 दिन के अन्तराल पर अगस्त माह पर रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

एन्थ्रेकनोज (*Colletotrichum gloeosporioides*): यह एक फफूँदी जनिक रोग है, जिसका लक्षण पत्तियों व फलों पर अगस्त से सितम्बर माह में दिखाई देना आरम्भ हो जाते है। पत्तियों की सतह पर पहले छोटे आकर के विभिन्न रंग गोल, भूरे, पीले किनारों वाली धब्बे दिखाई देते है। धब्बों के बीच का भाग हल्का भूरा तथा काले पिन के सिरे से उभार सहित दिखाई देता है।

नियंत्रण

इस रोग के प्रबंधन के लिए मंकोज़ेब (Mancozeb) 75W.P. (0.2), Cuman-L (0.3%) और कॉपर ओक्सीक्लोराइड (Copper oxychloride) 50W.P. (0.3%) का छिड़काव करने से कभी हद का इस समस्या का समाधान होता है और इसके लिए उचित प्रबंधन के लिए गहरी जुताई सर्वोत्तम है।

आंवले के विकार

फल परिगलन (नेक्रोसिस) एंव आन्तरिक सड़नः

नेक्रोसिस आवंला के प्रमुख विकारो में से एक है। इसे मुख्यता आवंला के फलो पर पाया जाता है। यह बोरान की कमी से होता है। इसके समस्या ब्राउनिंग के साथ शुरू होती है। अन्ततय मेसोकार्प और एपिकार्प की ऊपर भूरे काले रूप धब्बे के नुमा संरचना हो जाती है।

नियंत्रणः इसके रोकथाम के लिए बोरेक्स 0.6% का घोल का तीन छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर सितंबर महीने से शुरुआत करने से इसकी समस्या कम होती है और किसानो को आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। इस विकार के प्रति प्रभावित होने वाली प्रजाति का प्रयोग नही करना चाहिए। जैसे आंवला की फ्रान्सिस प्रजाति में यह रोग सबसे अधिक होता है लेकिन इसका प्रकोप कैइया, नरेन्द्र आवंला -6 तथा एन ए-7 में नहीं पाया गया है। अतः प्रजातियों के चुनाव बहुत सावधानी के साथ व्यावसायिक किसान अथवा फल विशेषज्ञ के परामर्श पर लगाना चाहिए।

निष्कर्ष

आंवला एक बहुत उपयोगी औषधीय फल है, जो मुख्यतः सभी मिट्टी में आसानी से उगाया जा सकता है, कम लागत के साथ पोषक तत्व की प्रचुर मात्रा जो इस फल को उपयोगी बनाते है। इसका सेवन करने से बहुत से प्रकार के रोगों से निजात मिल सकता है, जैसे खाँसी, कब्ज, पाण्डु, रक्तपित्त, अरुचि, त्रिदोष, दमा, क्षय, हृदयरोग और मूत्रविकार जैसे अनेक रोगों को नष्ट करने की शक्ति रखता है। और इस फल का कुछ अनोखा गुण यह है की कम उर्वरा वाली मिट्टी में भी आसानी से फल धारण कर लेता है और किसानो को लाभ प्रदान करता है, इस फल से कई प्रकार के उत्पाद बनाये जाते है जो किसानो के आर्थिक मूल्यवर्धक दृष्टीकोण से बहु उपयोगी है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

जल का अनमोल रत्न मखाना

अमृत वार्षिनी[1]* एवं स्वप्निल श्रीवास्तव[2]

[1]प्रसार शिक्षा विभाग ,आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या

[2]कृषि जैव प्रौधोगिकी विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ

पत्राचारकर्ता: amritwarshini1312@gmail.com

परिचय

मखाना जल में उगने वाली एक अनोखी और पोषण से भरपूर सूखा मेवा है। यह जलकुंभी कुल का सदस्य है। तालाबों, झीलों, दलदलों और गड्ढों जैसे स्थिर जल स्रोतों में इसकी खेती की जाती है। मखाना एक स्वपरागित पौधा है, जिसका निषेचन इसके विकास के शुरुआती चरण में ही हो जाता है। बिहार में इसे "गोरख धुंआ" के नाम से जाना जाता है और यह वहां का एक लोकप्रिय, धार्मिक अनुष्ठानों में प्रयोग होने वाला, सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण और बेजोड़ उत्पाद है। मखाना की खेती से हजारों गरीब किसान, खासकर बिहार के किसानों को आजीविका प्राप्त होती है। यह एक नकदी फसल है और बाजार में इसे भूना हुआ मखाना या "लावा मखाना" के रूप में बेचा जाता है।

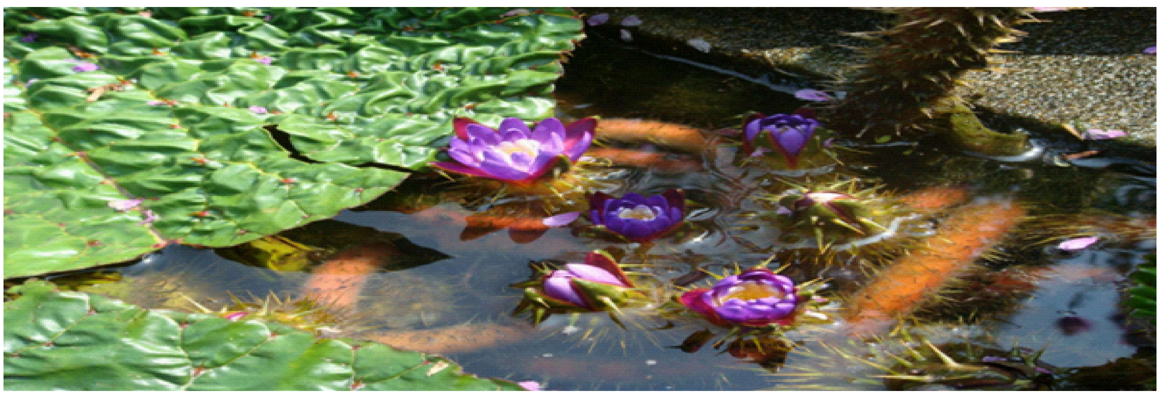

चित्र 1: यूरीएल फेरोक्स अपने प्राकृतिक जलीय वातावरण में बढ़ता हुआ

उत्पत्ति

माना जाता है, कि मखाना का पौधा दक्षिण-पूर्व एशिया और चीन का मूल निवासी है।

महत्व

सबसे कम वसा वाले सूखे मेवों में से एक, मखाना कार्बोहाइड्रेट, कैल्सियम, प्रोटीन और खनिजों से भरपूर होता है। इसका व्यापक रूप से दूध आधारित खाद्य पदार्थों में उपयोग किया जाता है। वस्त्र उद्योगों के लिए यह स्टार्च का एक स्रोत भी है। इसके अलावा, मखाना में सभी आवश्यक अमीनो एसिड भी पाए जाते हैं। फूले हुए और भूने हुए मखाना का प्रयोग वैदिक यज्ञों और अन्य धार्मिक अनुष्ठानों में किया जाता है। आज विश्व बाजार में इसे "सुपर फूड" के रूप में भी जाना जाता है, यह कैल्सियम का भरपूर श्रोत है।

औषधीय गुण

हम मखाना के अन्य गुणों के साथ-साथ उसके औषधीय गुणों से परिचित है, जो की निमलिखित हैः

- गठिया और पित्त विकारों के लिए लाभदायक।
- सफेद पानी के उपचार में उपयोगी और रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने वाला।
- हृदय रोगों को नियंत्रित करने में सहायक, क्योंकि इसमें थियोरेडॉक्सिन-1 और थियोरेडॉक्सिन-संबंधित प्रोटीन-32 की मात्रा अधिक होती है।
- पौधे के कंद का उपयोग मूत्रवर्धक के रूप में और जलोदर, पीलिया, सूजन, और गोनोरिया के उपचार में किया जाता है।

• पके हुए बीजों का उपयोग दस्त के इलाज में किया जाता है।

• मखाना में फ्लेवोनॉइड्स पाए जाते हैं, जो शरीर में उत्पन्न होने वाले मुक्त कणों के हानिकारक प्रभावों को कम करने में मदद करते हैं।

• अपने उच्च मात्रा में मौजूद शक्तिशाली एंटीऑक्सीडेंट और कामोद्दीपक गुणों के कारण मखाना को "एंटी-एजिंग फूड" के रूप में जाना जाता है।

पोषण का महत्व

पोषक तत्व (Nutrient)	मात्रा (100 ग्राम में) (Quantity in 100 grams)
वसा (Fat)	0.1 ग्राम
कार्बोहाइड्रेट (Carbohydrates)	76.9 ग्राम
प्रोटीन (Protein)	9.7 ग्राम
खनिज (Minerals)	0.5 ग्राम
कैलोरी मान (Calories)	
- कच्चे बीज (Seeds)	362 किलो कैलोरी
- पके वाले बीज (Puffed See)	328 किलो कैलोरी

फसल उत्पादन

मापदंड	तालाब प्रणाली	खेत प्रणाली
मौसम	सर्दी	गर्मियों में रोपाई
बुवाई का समय	दिसबर	दिसंबर में नर्सरी तैयार करना
पानी की आवश्यकता	न्यूनतम 3 से 4 फीट	लगभग 1.5 फीट
बीज की आवश्यकता	80-90 किग्रा/हेक्टेयर	20 किग्रा हेक्टेयर
जल स्रोत	प्राकृतिक जल स्रोत के रूप में बारहमासी जल निकाय	सिंचाई का पानी या किसी अन्य बारहमासी जल स्रोत
उर्वरक और खाद	गहरे पानी के कारण संभव नहीं	रोपाई से पहले और बाद में बहुत आसानी से लगाया जा सकता है
खरपतवार प्रबंधन	बहुत कठिन	बहुत आसान
फसल अवधि	लंबा से बहुत लंबा (8-10 महीने)	छोटा (4-5 महीने)
बीज की उपज	1.5-2.0 टन/हेक्टेयर	2.6-3.5 टन/हेक्टेयर
अनाज और चारा उत्पादन की गुंजाइश	संभव नहीं	सिंहारा, धान, गेहूं, बरसीम और अन्य खेत फसलों को में उगाया जा सकता है।
एक वर्ष में फसलों की अधिकतम संख्या की संभावना	दो	तीन
फसल प्रणाली	सिंहारे के साथ मखाना	मखाना-सिंहारा, मखाना-बरसीम और मखाना-धान-गेहूं
फसल संरक्षण उपाय	बहुत कठिन	काफी व्यवहार्य
फसल तीव्रता (%)	पारंपरिक प्रणाली में सामान्यतः (100%)	200-300%
शुद्ध आय	पारंपरिक प्रणाली में निम्न से मध्यम	उच्च से बहुत उच्च
कटाई की व्यवहार्यता	बहुत कठिन यह केवल प्रशिक्षित मजदूरों द्वारा ही किया जा सकता है।	बहुत सरल इसे अकुशल मजदूर भी आसानी से कर सकते हैं।
पूंजी निवेश	प्रारंभिक चरणों के दौरानः उच्च से बहुत उच्च	मध्यम से निम्न

मापदंड	तालाब प्रणाली	खेत प्रणाली
मखाना की खेती के क्षैतिज विस्तार की गुंजाइश	सीमित गुंजाइश क्योंकि यह प्राकृतिक जल निकायों की उपलब्धता पर निर्भर करेगा।	व्यापक गुंजाइश

वितरण

दक्षिण-पूर्व एशियाँ देशों जैसे चीन, कोरिया, जापान, रूस, उत्तरी अमेरिका, नेपाल, बांग्लादेश, थाईलैंड और पाकिस्तान में मखाना पाया जाता है। भारत में, यह बिहार, पश्चिम बंगाल, असम, मणिपुर, त्रिपुरा, पूर्वी ओडिशा, कश्मीर, पूर्वी बंगाल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान और पूर्वी उत्तर प्रदेश में पाया जाता है। हालांकि, इसकी व्यावसायिक खेती मुख्य रूप से उत्तर बिहार के मिथिलांचल क्षेत्र में ही सीमित है।

मखाना पॉपिंग से संबंधित मुद्दे

मखाना का पॉपिंग एक श्रमसाध्य, समय लेने वाली और जटिल प्रक्रिया है। एक 3-चरणीय मैनुअल प्रक्रिया में, बीजों को पारंपरिक मिट्टी के बर्तन या लोहे के कड़ाही में $250^{0}C$ की दर से $320^{0}C$ तक के बहुत उच्च तापमान पर भुना जाता है, फिर 2 से 3 दिनों तक टेम्पर किया जाता है और भुना जाता है, फिर मैनुअल रूप से एक मैलेट का उपयोग करके पॉप किया जाता है। भुनाई के बाद मैलेटिंग के लिए अत्यधिक कुशल श्रमिकों की आवश्यकता होती है क्योंकि मैलेटिंग में कुछ सेकेंड की देरी से खराब गुणवत्ता वाला पॉप मखाना बन जाएगा। पॉपिंग से प्रोसेसर के हाथों में जलन और चोटें लगती हैं क्योंकि इसमें गर्म भुने हुए नट्स को मैनुअल रूप से संभालना शामिल है।

मखाना के लिए जीआई टैग प्राप्त करने में बिहार की यात्रा

- भारत सरकार ने किसानों को अपनी उपज का अधिकतम मूल्य दिलाने में मदद करने के लिए मिथिला मखाना को भौगोलिक संकेत (जीआई) टैग प्रदान किया है। "मिथिला मखाना", जैसा कि इसके नाम से पता चलता है, बिहार के मिथिला क्षेत्र और नेपाल के कुछ हिस्सों में उगाया जाता है, यह बिहार का पाँचवा कृषि उत्पाद है जिसे जीआई टैग मिला है।
- भौगोलिक संकेत (जीआई) के लिए आवेदन करने से पहले किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) का गठन करना महत्वपूर्ण है। इसके लिए, 20 अप्रैल 2018 को मिथिलांचल किसान उत्पादक संगठन का गठन किया गया और भोला पासवान शास्त्री कृषि महाविद्यालय, पूर्णिया (बीएयू, सबौर, भागलपुर) के तकनीकी सहयोग से समाज पंजीकरण अधिनियम 21, 1860 के तहत पंजीकृत किया गया, जिसका उद्देश्य मखाना उत्पादकों का समग्र विकास और मखाना का ब्रांडिंग था। 16 अगस्त 2022 को मिथिलांचल किसान उत्पादक संगठन को जीआई टैग आवंटित किया गया।
- भोला पासवान शास्त्री कृषि महाविद्यालय, पूर्णिया (बीएयू सबौर) के मखाना वैज्ञानिकों की एक टीम ने मखाना के इतिहास को स्पष्ट करते हुए 1,000 से अधिक पृष्ठों का एक दस्तावेज तैयार किया और जीआई रजिस्ट्री कार्यालय, चेन्नई को मखाना के जीआई पंजीकरण के लिए आवेदन किया। इस संबंध में, जीआई निदेशालय, चेन्नई द्वारा बामेती, पटना में एक बैठक का आयोजन किया गया।
- पंजीकरण प्रमाण पत्र के अनुसार, बिहार राज्य मेंय दरभंगा, मुजफ्फरपुर, मधुबनी और कटिहार सहित अन्य जिलों को मिथिला मखाना के उत्पादन के लिए भौगोलिक स्थान के रूप में परिभाषित किया गया है।

किस्में और उत्पाद के प्रकार

- मखाना मुख्य रूप से पिछले कई वर्षों से स्थानीय किस्मों के साथ उगाया और खेती की जाती रही है।
- आईसीएआर रिसर्च कॉम्प्लेक्स फॉर ईस्टर्न रीजन, पटना (बिहार) ने स्वर्ण वैदेही नाम से मखाना की पहली किस्म विकसित की है।
- इस किस्म में उच्च उपज और कीटों-सामान्य कीड़ों और रोगों के प्रति प्रतिरोध की क्षमता है।

कटाई

- तालाब या उथले जल क्षेत्र के तल पर बिखरे हुए बीजों को अगस्त और अक्टूबर के दौरान मैन्युअल रूप से एकत्र किया जाता है।
- मखाना के बीजों की कटाई पानी के अंदर गहराई में डुबकी लगाकर की जाती है।

• मखाना की उपज सामान्यतः प्रति हेक्टेयर 1,200 से 1,500 किलोग्राम तक होती है।

• हालांकि कम गहराई वाले जल निकायों में उपज प्रति हेक्टेयर 1,800-2,200 किलोग्राम तक होती है।

बाजार की संभावना

• मखाना क्षेत्र में मूल्य वर्धन, उत्पाद विकास और नवाचार की अपार संभावनाएं हैं।

• राज्य और देश के आर्थिक स्वास्थ्य को मजबूत करना और अद्भुत फसलों को गौरव प्रदान करना।

• मखाना बाजार 2019-2023 की पूर्वानुमान अवधि के दौरान लगभग 7 की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर से बढ़ेगा।

• वैश्विक मखाना बाजार का आकार 2019-2023 के दौरान 72.5 मिलियन अमेरिकी डॉलर बढ़ेगा।

• मखाना भारत, चीन, जापान और थाईलैंड जैसे देशों में अत्यधिक लोकप्रिय है।

• यूके और यूएस जैसे पश्चिमी देशों में मखाना बाजार की संभावना अभी भी अनछुई है।

उत्पादन

• भारत में मखाना को एक जलीय नकदी फसल माना जाता है।

• भारत में बिहार इसके उत्पादन और प्रसंस्करण में अग्रणी राज्य है।

• अनुमान है कि बिहार देश के कुल मखाना उत्पादन का 80 प्रतिशत से अधिक का हिस्सा लेता है।

• भारत में मखाना की खेती के तहत कुल क्षेत्रफल 15,000 हेक्टेयर होने का अनुमान है। यह 1,20,000 मीट्रिक टन मखाना बीज देता है, जो प्रसंस्करण के बाद 40,000 मीट्रिक टन मखाना पॉप का उत्पादन करता है।

• किसान स्तर पर उत्पादन का अनुमानित मूल्य 250 करोड़ रुपये है और यह व्यापारी स्तर पर 550 करोड़ रुपये का राजस्व उत्पन्न करता है।

यंत्र एवं उपकरण

पारंपरिक उपकरण एवं यंत्र

खोंग्घी या डेलाः यह बेलनाकार आकार वाली छोटी बांस की डंडी वाली बाल्टी होती है। इसका उपयोग कच्चे, फटे बीजों को भंडारण करने और पॉलिशिंग कार्यों में किया जाता है।

चलनीः चलनी लोहे की चादरों से बनी होती हैं, जिनमें लकड़ी के फ्रेम होते हैं। आमतौर पर कच्चे मखाना बीज की ग्रेडिंग के लिए विभिन्न जाली आकारों की सात से दस छलनी का उपयोग किया जाता है।

चटाईयाँः कच्चे मखाना के बीजों को भूनने से पहले धूप में सुखाने के लिए चटाइयों का उपयोग किया जाता है।

लोहे का तवाः यह एक कुकिंग पैन या बर्तन है, जिसका उपयोग मखाना के बीजों को पहले से गर्म करने और भूनने के लिए किया जाता है।

अपहरा, बतना एवं थापीः ये कठोर लकड़ी से बने लकड़ी के उपकरण हैं, ज्यादातर शीशम या आम के. अपहरा एक ऐसा मंच है, जिस पर भुने हुए बीजों को थापी नामक एक सपाट लकड़ी के हथौड़े से मारा जाता है।

चूल्हे (मिट्टी के पैन)ः इन्हें बिना रेत के मिश्रण के धूप में सुखाई गई गिरी या गुरियों को भूनने के लिए उपयोग किया जाता है।

बाँस की छड़ेंः इनका उपयोग मखाना के बीजों को भूनते समय उन्हें हिलाने के लिए किया जाता है।

नवीनतम मशीनरी एवं उपकरण

• कच्चा मखाना बीज वॉशर

• मखाना बीज ग्रेडर

• मखाना बीज सुखाने की मशीन

• बीज भूनने की मशीन

• भूनने और फोड़ने की मशीन

• फटा हुआ मखाना ग्रेडर

• बिना फटा मखाना ग्राइंडर

• संयंत्र के लिए नियंत्रण कक्ष

तैयार एवं मूल्य वर्धित उत्पाद

• यह अत्यंत स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ है, जो नमकीन, स्नैक्स, खीर, करी, नाश्ते के अनाज, आदि के रूप में खाया जाता है।

• कई स्वादिष्ट और समृद्ध मिठाई व्यंजन जैसे मखाना खीर, सेवई, हलवा और पुडिंग बहुत लोकप्रिय हैं।

• मखाना से उत्पादित आटे का उपयोग एरो रूट के विकल्प के रूप में और विभिन्न खाद्य तैयारियों में गाढ़ा करने वाले के रूप में किया जाता है।

कुछ अन्य मूल्य वर्धित उत्पाद

• पॉप मखाना

• मखाना स्नैक्स

- इंस्टेंट मखाना खीर मिक्स
- मखाना आटा या पाउडर
- मखाना रेडी-टू-ईट नाश्ता सीरियल
- मखाना बेबी फूड्स या दलिया
- मखाना मिठाइयाँ जैसे बर्फी और कालाकंद
- मखाना बेकरी उत्पाद जैसे ब्रेडध्बन और कुकीज

उप-उत्पाद

- मखाना प्रसंस्करण का उप-उत्पाद चोकर बाहरी आवरण है।
- मखाना चोकर का उपयोग पोल्ट्री फीड सामग्री के रूप में किया जा सकता है।
- मखाना बाहरी आवरण का उपयोग ईंधन के लिए किया जा सकता है।

सूक्ष्म संगठित उद्यम के अवसर

छोटे खाद्य व्यापार संचालकों की आय बढ़ाने और स्वास्थ्य और सुरक्षा मानकों को एक मेगा-विकास योजना के रूप में सुधारने के लिए वैश्विक पहुँच दृष्टि के साथ सरकार की ''वोकल फॉर लोकल'' और ''आत्मनिर्भर भारत'' योजना।

योजना को इन प्रमुख क्षेत्रों के तहत लागू किया जाएगा।

- सभी अपंजीकृत और असंगठित खाद्य व्यापार संचालकों (एफबीओ) का पंजीकरण।
- सूक्ष्म संगठित उद्यम के अवसर।
- खाद्य फसल के रूप में मखाना को भी क्लस्टर-आधारित दृष्टिकोण के लिए चुना गया है।
- निर्यात बाजार को बढ़ाने के लिए खुदरा श्रृंखला के साथ एकीकरण के साथ बेहतर स्वास्थ्य और सुरक्षा के साथ निर्यात संवर्धन।
- मखाना किसानों को एक सूक्ष्म वित्तीय संस्थान (एमएफआई) से जोड़ा जा सकता है, जो स्वयं सहायता समूहों के गठन के माध्यम से सूक्ष्म ऋण प्रदान करेगा, स्वास्थ्य बीमा को बढ़ावा देगा और जोखिम को कम करेगा।

संदर्भ

- बिहार बागवानी विकास सोसाइटी।
- मखाना प्रसंस्करणः खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार।

निष्कर्ष

मखाना एक बहुमूल्य जलीय फसल है, जो न केवल पोषण से भरपूर है, बल्कि आर्थिक और सांस्कृतिक महत्व भी रखती है। यह विशेष रूप से बिहार राज्य के लिए एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। मखाना की खेती से हजारों किसानों को आजीविका मिलती है और यह भारत के कुल मखाना उत्पादन का 80% से अधिक योगदान देता है।

मखाना की खेती और प्रसंस्करण में कई चुनौतियाँ हैं, जैसे श्रम-गहन प्रक्रियाएं और पारंपरिक तकनीकों पर निर्भरता। हालांकि, नवीनतम मशीनरी और उपकरणों के विकास से इन चुनौतियों को दूर करने में मदद मिल रही है।

मखाना के लिए जीआई टैग प्राप्त करना एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है, जो इसकी विशिष्टता को मान्यता देती है और बाजार में इसकी स्थिति को मजबूत करती है। मूल्य वर्धित उत्पादों के विकास और निर्यात बाजार के विस्तार से मखाना क्षेत्र में व्यापक संभावनाएं हैं।

सरकार की 'वोकल फॉर लोकल' और 'आत्मनिर्भर भारत' योजनाओं के तहत, मखाना उत्पादन और प्रसंस्करण में सूक्ष्म संगठित उद्यमों के लिए नए अवसर खुल रहे हैं। इससे न केवल किसानों और छोटे व्यापारियों की आय बढ़ेगी, बल्कि स्वास्थ्य और सुरक्षा मानकों में भी सुधार होगा।

संक्षेप में, मखाना भारत के कृषि क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण फसल है, जिसमें आर्थिक विकास और ग्रामीण रोजगार सृजन की अपार संभावनाएं हैं। नवीन तकनीकों, मूल्य संवर्धन और नीतिगत समर्थन के साथ, मखाना क्षेत्र भविष्य में और अधिक समृद्धि की ओर अग्रसर है।

ISSN No. 2583-3316

अमरूद की उत्पादन तकनीक एवं प्रबंधन

डी. के. जायसवाल[1] , एन. आर. रंगारे[2*] एवं नारायन लाल[3]

[1]बिहार कृषि विश्वविद्यालय सबौर, भागलपुर, बिहार

[2]मंगलायतन विश्वविद्यालय, जबलपुर

[3]भा. कृ. अ. प., भारतीय मृदा विज्ञान संस्थान, भोपाल

पत्राचारकर्ता: nrrangare@gmail.com

परिचय

सामान्यतः अमरूद को गरीबो के सेब के रूप में जाना जाता है। अमरूद अपने अधिक पोषक तत्वों के कारण विश्व विख्यात है, भारत में इसकी खेती हिमालय से लेकर कन्या कुमारी तक की जाती है। उच्च गुणवक्तायुक्त अमरूद का उत्पादन, प्रयागराज एवं इसके आसपास के क्षेत्रो मे अधिक होता है। सामान्य तौर पर अमरूद का उत्पादन वर्ष भर किया जाता है, परन्तु सर्दी के मौसम में उत्पादित होने वाले फल उच्च गुणवक्ता वाले होते हैं अन्य फलों की तरह अमरुद भी मुख्य फलों की श्रेणी में आता है, जो कि अपने मीठे स्वाद व औषधीय गुणों से परिपूर्ण हैं।

अमरूद के फल में प्रमुख रूप से विटामिन A एवं B पेक्टिन, कैल्सियम, फॉस्फोरस, रेशा एवं खनिज प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं, जो मानव स्वास्थ के लिये अत्यंत आवश्यक है।

मृदा एवं जलवायुः अमरूद का पौधा एक विस्तृत श्रृंखला वाले मृदा, जिसमें रेतीली मिट्टी, चिकनी बलुई मिट्टी इत्यादि में आसानी से उगाया जा सकता है। उत्तर भारत में उच्च गुणवत्ता वाले अमरूद का फल, मुख्य रूप से हल्की रेतीली मिट्टी जो नदी के घाटियो मे पायी जाती है, में उत्पादन किया जाता है। मृदा जिसका पी. एच मान 8.5 तक हो, अमरूद की खेती के लिये सर्वोत्तम माना जाता है, लवणीय एवं क्षारीय मृदाएँ अमरूद की खेती के लिये उपयुक्त नही हैं। अमरूद को उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय जलवायु वाले क्षेत्र में आसानी से उगाया जा सकता है। उच्च गुणवत्ता वाले फल के उत्पादन के लिये खिली धूप वाले दिन एवं रात्रि के समय कम तापमान लगभग (10-12^{O}C) आवश्यक होता है। फल की तुड़ाई के समय वर्षा होने से फल की गुणवत्ता, खराब होती है और साथ ही साथ फल छेंदक एवं फल मक्खियों का प्रकोप भी बढ़ जाता है।

अमरूद की उन्नत किस्में: भारत में उगाये जाने वाली अमरूद की किस्मों को मुख्य रूप से दो भागों या समूहों में वर्गीकृत किया गया हैं।

क. सफेद गूदे वाली किस्में

ख. गुलाबी गूदे वाली किस्में

व्यावसायिक दृष्टिकोण से अमरूद की किस्में जैसे सरदार जिसे लखनऊ-49 भी कहा जाता है, इलाहाबाद सफेदा, चित्तीदार, एप्पल कलर, इलाहाबाद सुर्खा हरिझा इत्यादि की खेती भारत के विभिन्न राज्यों में की जा रही है। इनमें से प्रमुख रूप से सरदार, ललित, स्वेता, इलाहाबाद सफेदा मे अनुकूलन क्षमता अत्यधिक होने के कारण ये किस्में भारत के लगभग सभी भू-भागों में खेती करने के लिये अनुशांसित की गई है। हरिझा किस्म, उच्च उत्पादन के कारण इसकी खेती प्रमुख रूप से बिहार राज्य में की जाती है।

V. N. R **बीहीः** अमरूद की यह किस्म व्ही. एन. आर. नर्सरी के द्वारा विकसित की गई है, इस किस्म के फल अपेक्षाकृत अन्य किस्मों के फल से आकार में बड़े होते है, औसतन एक फल का वजन 300-1,000 ग्राम तक होता है, इसके अतिरिक्त इसके फल मे बीज की मात्रा कम होती है। इस किस्म के फल का उत्पादन पौध रोपण के दूसरे वर्ष से प्रारंभ हो जाता हैं, सामान्य अवस्था में इसके फलों को 15 दिनों तक एवं प्रशीतन स्थिति में 30 दिन तक सुरक्षित रखा जा सकता है, इस किस्म को लगभग सभी प्रकार के मृदा में असानी से उगाया जा सकता हैं।

अमरूद की पौध तैयार करनाः अमरूद को व्यवसायिक रूप से बीज एवं वानस्पतिक विधि दोनो के द्वारा पौध तैयार

किया जाता है, परन्तु गूँटी एवं कलम विधि का उपयोग मुख्यतः एक सफल फल उद्यान या फल वाटिका को स्थापित करने के लिये किया जाता है।

पौध रोपणः अमरूद का बगीचा या उद्यान तैयार करने के लिये सर्वप्रथम गर्मी के मौसम में (अप्रैल-मई) 100 सेमी. X 100 सेमी. X 100 सेमी. के आकार के गड्ढ़े तैयार किये जाते है, लगभग 15 से 20 दिनो बाद 20 कि.ग्रा. कार्बनिक खाद प्रति घंटे की दर से डाला जाता है। सामान्यतः अमरूद को 6 मी. X 6 मी. की दूरी पर पौध रोपण किया जाता है, जिससे 277 पौधे प्रति हेक्टेयर में रोपित किया जाता है।

अमरूद का उच्च घनत्व रोपणः उच्च घनत्व रोपण के लिये अमरूद के पौधे को 3 मी. X 1.5 मी. या 3 मी. X 3 मी. या 6 मी. X 3 मी. की दूरी पर पौध रोपण किया जाता है।

अति उच्च घनत्व रोपणः अमरूद के पौधे को 2 मी. X 1 मी. की दूरी से रोपण किया जाता है, जिससे लगभग 5,000 पौधें एक हेक्टेयर में आसानी से रोपित किये जा सकते हैं।

अमरूद के पौधे की कटाई एवं छटाई, पौध का आकार, आकृति या संरचना का प्रबंधनः अमरूद के पौधे को निरन्तर कटाई व छटाई की आवश्यकता होती है, अन्यथा कुछ वर्षो के पश्चात् अमरूद के पौधे की संरचना का प्रबंधन करना मुश्किल हो जाता हैं। कटाई एवं छटाई की अनुसंशा इसलिए भी की जाती है, जिससे की एक - दूसरे तने के बीच मे बड़ा कोण बन सके एवं तना एक दूसरे से उलझ न सकें। अत्यधिक कटाई व छटाई करने से फलन टहनी की संख्या कम हो जाती है एवं पौधे का आंतरिक भाग फलन रहित हो जाता है।

कटाई व छटाई करने से उपज या उत्पादन के साथ-साथ फल के भौतिक एवं रासायनिक गुणों में भी वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त पौधे की ऊँचाई को एक निश्चित ऊँचाई पर रखने से फलों को हाथ से तुड़ाई कर सकते है एवं उत्पादन लागत को भी कम किया जा सकता है।

उच्च घनत्व वाले फल वाटिका या उद्यान का प्रबंधन

पौध रोपण

(3 मी. X 1.5 मी. 3 मी. X 3 मी., 6 मी. X 3 मी.)

↓

मृदा की सतह से 60-70 से मी. की ऊँचाई पर पौधे के ऊपरी भाग को काट कर अलग कर देना चाहियें, यह कार्य पौध रोपण के 1-2 महीने बाद किया जा सकता है

↓

कटे हुये भाग के निचले हिस्से से नई टहनियाँ निकलती है

↓

बराबर दूरी वाली केवल 3-4 टहनियों को ही रखना है एवं अन्य को काटकर अलग कर देना चाहिये

↓

लगभग 3-4 महीने बाद टहनियों की कटाई एवं छटाई करते हैं, इस क्रिया में टहनी के कुल लम्बाई का लगभग 50 प्रतिशत भाग को काटकर अलग कर देते हैं

↓

कटे हुए भाग के निचले हिस्से से नई टहनी या शाखा निकलती है

↓

लगातार टहनियों को लगभग 3-4 महीने बाद टहनियों की कटाई एवं छटाई करते हैं, इस क्रिया में टहनी के कुल लम्बाई का लगभग 50 प्रतिशत भाग को काटकर अलग कर देते हैं एवं दूसरे वर्ष तक काट छाँट को वांछनीय आकार प्राप्त करने के लिये किया जाता है

↓

शाखा की कटाई एवं छटाई

↓

मई-जून (शरद ऋतु के फलन के लिये) | जनवरी-फरवरी (वर्षा ऋतु के फलन के लिये)

↓

पौधे का आकार एवं रचना के लिये प्रति वर्ष लगभग 50 प्रतिशत भाग को कांट छांट कर अलग कर देना चाहिये, यह कार्य पौध रोपण से लगभग 4-5 वर्ष तक करना चाहियें

खाद एवं उर्वरकः उच्च घनत्व वाले बगीचे या अति उच्च घनत्व वाले अमरूद के बगीचे में खाद एवं उर्वरक की मात्र पौधे की उम्र, पौधे की अवस्था एवं मृदा के प्रकार पर निर्भर करता है, अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिये खाद एवं उर्वरक की मात्रा नीचे दिये गयें तालिका के अनुसार करना चाहियें।

जब कतार से कतार की दूरी एवं पौध से पौध की दूरी 3X 1.5 मी. एवं 3 X 3 मी. एवं 6 X 3 मी. हो तो उर्वरक की मात्रा प्रतिवर्ष निम्नानुसार होना चाहिये।

वर्ष	यूरिया (ग्राम प्रति पौधा)		एस. एस. पी. (ग्राम प्रति पौधा)	एम. ओ. पी. (ग्राम प्रति पौधा)
	जून	सितम्बर	सितम्बर	जून
1st	182	78	375	100
2nd	364	156	750	200
3rd	546	234	1125	300
4th	728	312	1500	400
5th या ऊपर	910	390	1875	500

2 X 1 मी. की दूरी पर उर्वरक की मात्रा

वर्ष	यूरिया (ग्राम प्रति पौधा)		एस. एस. पी. (ग्राम प्रति पौधा)	एम. ओ. पी. (ग्राम प्रति पौधा)
	जून	सितम्बर	सितम्बर	जून
1st	90	40	185	50
2nd	180	110	370	100
3rd	270	115	555	150
4th	360	150	740	200
5th या ऊपर	450	190	900	250

इसके अतिरिक्त यूरिया /1-2 प्रतिशत या पोटेशियम सल्फेट 1 प्रतिशत का पर्ण छिड़काव करने से फल की गुणवक्ता बढ़ती हैं। इसी तरह गूदा में जिंक की मात्रा कम होने पर जिंक सल्फेट (0.45 किग्रा.) या बुझा हुआ चूना (0.32 किग्रा) 33 लीटर पानी मे अच्छी तरह मिला कर मृदा मे प्रयोग करना चाहिये।

सिंचाई: नये पौधे के रोपण के समय सिंचाई करना आवश्यक है, रोपण के प्रथम सप्ताह में प्रति दूसरे दिन एवं उसके अगले सप्ताह में दो दिन सिचाई करना आवश्यक हैं, मानसून आने के बाद सिंचाई आवश्यकतानुसार करना चाहिये। जब पौधा 2 वर्ष या इससे अधिक का हो जाये तब सिंचाई का कार्य गर्मी के दिनों में 7-10 दिनों के अंतराल मे एवं सर्दी के दिनों मे 20-25 दिनों के अंतराल में सिंचाई करना चाहिये।

टपक सिंचाई प्रणाली: उत्पादन, उत्पादकता एवं फल के गुणों को बढ़ाने के लिये टपक या बूंद सिंचाई प्रणाली आवश्यक होता है, ऐसे स्थान जहाँ पर पानी की कमी होती है, वहाँ टपक सिंचाई अत्यंत लाभदायक होती हैं। इस विधि से लगभग 40 प्रतिशत उत्पादन में वृद्धि एवं 40-50 प्रतिशत पानी की बचत होती है। जब दूरी 3 X 1.5 मी. 3 X 3 मी. एवं 6 X 3 मी. हो तब सिंचाई नियमानुसार करनी चाहिये।

वर्ष	टपक सिंचाई (लीटर प्रति दिन प्रति पौधा)
1st	4 से 6
2nd	8 से 12
3rd	15 से 20
4th	25 से 30
5th या इससे ऊपर	35 से 40

अति उच्च घनत्व वाले फल उद्यान के लिये (2 X 1 मी.)

वर्ष	टपक सिंचाई (लीटर प्रति दिन प्रति पौधा)
1st	2 से 3
2nd	4 से 5
3rd	6 से 8
4th	10 से 12
5th या इससे ऊपर	14 से 16

गुणवत्ता में सुधारः अमरूद के फल को कागज के थैले या पॉलीथीन के थैले से ढकने पर उसके अन्दर का सूक्ष्म वातावरण बदल जाता है, जिससे अमरूद के फल को कीट, रोग एवं बीमारियो से भौतिक रूप से संरक्षण किया जा सकता है, जिससे अमरूद के फल के गुणवत्ता में सुधार होता है।

बायोफोर्टिफिकेशनः बायोफोर्टिफिकेशन मुख्य फसलों को कृषि संबंधित क्रियाये या चयनात्मक प्रजनन या आनुवंशिक संशोधनों के माध्यम से आवश्यक पोषक तत्वों के उच्च स्तर के लिये प्रजनन करने की प्रक्रिया है।

उदाहरणः अमरूद के पौधे में रणनीतिक रूप से कैल्शियम क्लोराइड का छिड़काव करके अमरूद के फल में कैल्शियम की मात्रा को बढाया जा सकता है एवं एक बहुत बडी मानव आबादी या जनसंख्या को कैल्शियम की कमी से होने वाले रोग से बचाया जा सकता है।

बायोकोर्टिफिकेशन

कृषि शास्त्रीय बायो फोर्टिफिकेशन

पारंपरिक प्रजन्न बायो फोर्टिफिकेशन

अनुवांशिक संशोधन बायोको टिफिकेशन

कीट एवं बीमारियाः अमरूद मे प्रमुख रूप से कवक जनक बीमारी जैसे, उकठा रोग, फूल सड़न, डाईबैंक, केंकर एवं एन्थ्रेकनोज हैं।

प्रमुख बीमारियों के लक्षण एवं प्रबंधन

बीमारी का नाम	बीमारी के लक्षण	प्रबंधन
• उकठा रोग	• प्रारंभिक लक्षण के रूप में ऊपरी शाखाओं की पत्तियों को मुड़ जाना एवं रंग विभेद होकर पीला पड़ जाना है, • बाद में पीला रंग, लाल रंग में बदल जाता है। जिसके परिणामस्वरूप पत्तियाँ नीचे गिर जाती है।	• उद्यान को अच्छे तरीके से साफ-सफाई का प्रबंधन करना चाहियें। • एस्पर जिलस नाईजर-17 को सडी हुई गौबर की खाद में मिलाकर 5 किग्रा प्रति गडढ़े का दर से रोपड़ के समय प्रयोग करना चाहिए एवं 10Kg/ गडढा वयस्क पौधे में प्रयोग करना चाहिए।
	• इस रोग से ग्रसित पौधे के फल का विकास रूक जाता है एवं फल अधिक कठोर हो जात है बाद मे पूरा पौधा ही पत्ती विहीन हो जाता है एवं उसके पश्चात् मर जाता है।	• AN-17 1Kg fym की दर से मिलाकर 1 मी. X 2 मी. X 3मी. का बेड तैयार करते है इसके बाद सिंचाई करते है। यह प्रकिया 15-20 दिनों तक चलती है।
• अमरूद का एन्थ्रेक्नोज	• इस रोग के कारण पौधा ऊपर से नीचे की ओर, सूखना प्रारंभ करता हैं। टहनी, डंठल एवं नई पत्तियाँ भी इस रोग से ग्रसित होकर सूखने अथवा मरने लगती है जिससे टहनियाँ भी सूखने लगती है।	• बोर्डो मिश्रण (3:3:50) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 03 प्रतिशत की दर से 7-10 दिन के अंतराल में छिड़काव करें।
	• फल एवं पत्तियों में रोग का संक्रमण सामान्यतः वर्षा ऋतु के फसल मे देखा गया है।	• डिफोल्टन 0.3 और डाइथेन 7-78 (0.2) का महीने में एक बार छिड़काव करें।
	• कच्चे फलो मे छोटे-छोटे धब्बे होते है, जो धीरे-धीरे बड़े हो जाते हैं। रोग ग्रसित क्षेत्र बाद में कठोर हो जाते हैं और अधिक संक्रमण होने पर फल में दरार विकसित हो जाते हैं।	• तुड़ाई के उपरांत फलों को 500 PPM टेट्रासाइक्लिन के घोल मे 20 मिनट तक डुबा कर रखना चाहिये।
अमरूद का नासूर या व्रण या फोड़ा	• इस रोग के प्रमुख लक्षण से मुख्यतः हरे व कच्चे फलों के बाहरी भाग में छोटे-छोटे भूरे रंग के गोलाकार अतक्षिय	• तीन से चार बार एक प्रतिशत (1%) बोर्डो मिश्रण या चुना सल्फर 15 दिन के अंतराल

केंकर	क्षेत्र विकसित होता है, जिससे बाद में आँसू या पानी बाह्य त्वचा से गोलाकार रूपे मे निकलता है। फोडा रोग फल के ऊपरी भाग मे ही संक्रमण करता है अर्थात् यह रोग फल के अंदर गहरे गूदे तक संक्रमण नही करता है। • छोटे एवं भूरे रंग के कोणीय धब्बें पत्तियों पर निकलने लगता है। • सर्दियों के मौसम में नासूर धब्बा का संक्रमण सामान्य हैं, परन्तु वर्षा के मौसम में छोटे एवं लाल रंग के धब्बे पाये जाते हैं।	में छिड़काव करें।
• फाइटोक्थोरा फल सड़न	• यह रोग सतह पर पडे हुये फल के निचले भाग (stylar end) में या ऐसे फूल जो सतह को स्पर्श अथवा छू रहे होते हैं और पत्तियों से चारो तरफ घिरे या ढके हुये होते है, उनमें अधिक संक्रमण होता है। अधिक आद्र या नम के मौसम में यह रोग अधिक तीव्रता के साथ फैलने लगता हैं एवं 3-4 दिन के बाद फल की सतह को पूरी तरह से संक्रमित कर देता है। • फल की त्वचा सफेद रुई के जैसे दिखने वाले फफूंद के जैसे होती है, वो बाद में थोड़ा कोमल होकर हल्के भूरे रंग से गहरे भूरे रंग का हो जाता है एवं फल से अप्रिय गंध आने लगती है।	• इस रोग के रोकथाम के लिये डायथेन Z-78 (0.2) प्रतिशत (10PPM) का छिड़काव का प्रभावी होता है।
• स्टाइलर एंड रॉट	• इस रोग का सर्वप्रथम लक्षण यह है, फल का निचला भाग रंगविहीन तो जाता है, बाद मे धीरे-धीरे इसका आकार बढने लगता है, जो बाद मे गहरा भूरा रंग का हो जाता है एवं यह भाग अत्यधिक कोमल हो जाता है, इसके बाद फल सुकडना प्रारंभ कर देता है एवं झुर्रिया विकसित हो जाती है, अतः पूरा फल भूरे रंग का हो जाता है	दूसरे रोकथाम के लिये कॉपर ऑक्सी क्लोरॉइड (0.3 प्रतिशत) का 15 दिन के अंतराल मे छिड़काव करें। • कारबेंन्डाजिम (0.1%) का दो छिड़काव 15 दिनो के अंतराल इस प्रकार करे कि अंतिम छिडकाव फल तुड़ाई के 12-15 दिनो पहले हो।

अनार की तितलीः यह कीट वर्षा एवं सर्दियाँ दोनो मौसम के फलन पर आक्रमण करता है। वर्षा के मौसम में (अगस्त माह) एवं सर्दी के मौसम में (नवम्बर-दिसम्बर) माह मे यह कीट अधिक प्रभावी रहता है। अर्थात् ज्यादा नुकसान पहुँचाता है बैगनी मादा तितली सफेद एवं चमकीले अंडे को फल एवं फूल के पुष्पकोश मे देती है। लार्वा या डिंभक या कीड़े का बच्चा फल को छेद कर गूदे एवं बीज को खाते है एवं फल को अन्दर से खोखला कर देते है।

प्रबंधनः नियमित रूप से संक्रमित फल को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिये।

• अमरूद के बागों के आसपास अनार की खेती को कम या नहीं करना चाहिये।

• कार्बारिल (0.2 प्रतिशत) या इथोफेन प्राक्स (0.05 प्रतिशत) का छिडकाव फल लगने से पहले एवं फल पकने से पहले करना चाहिये।

• **तना छेदकः** कीट के प्रकोप का प्रमुख लक्षण यह है, कि पौधे के आधार या निचले भाग में भूसे के रंग के गोली युक्त मल पदार्थ के साथ 20 से 30 मी. की दूरी पर पाये जाने वाले छोटे छिद्रो (1-1.5 मी.) के रूप में दिखाई देता है, गंभीर प्रकोप होने के कारण पत्तिया गिर जाती है, टहनी एवं शाखायें सूखने लगती

है और अतः पौधे की मृत्यु हो जाती है मादा शाखा में छेद करके अंडे देती है, बच्चा प्रारंभ में छाल को खाता है, बाद मे मुख्य तने में प्रवेश करता है एवं वक्राकार सुरंग बनाता है।

- **प्रबंधनः** भृंग या झींगुर को यांत्रिक रूप से नष्ट करना चाहिए।
- दिसम्बर एवं फरवरी के माह में प्रकोपित या संक्रमित शाखाओं को एकत्रित करके जला देना चाहिये।
- गंभीर प्रकोप होने पर डाइक्लोरोवास (0.1 प्रतिशत) का 5ML का इंजेक्सन से छिद्रो में लगाना चाहिये।
- सितम्बर एवं अक्टूबर माह में U आकार के छिद्रो वाले भाग जिसमे अंडे हो, एकत्रित करके नष्ट कर देना चाहिये।

अमरूद में लगने वाले कीट की पहचान एवं प्रबंधन

फल मक्खीः वर्षा ऋतु में अमरूद के उत्पादन में फल मक्खी एक गंभीर समस्या है, यह मक्खी पके हुये फल के बाहरी सतह से थोड़ा अन्दर अंडे देती हैं, जो बाद में गहरे गड्ढ़े जैसे दिखाई देने लगता है, अंडे सेने के पश्चात् कीड़ा फल के गूदे को खाने लगता है, जिससे फल उपभोग या खाने के लिये अनुपयोगी हो जाता है। ये कीड़े मृदा के अन्दर कोषस्थ कीट धारण (पुखुपा) करते हैं एवं 12-18 दिनों मे अपना जीवन चक्र जुलाई-अगस्त माह में पूरा करते हैं।

प्रबंधनः संक्रमित या पीड़ित फल को एकत्रित करके नष्ट कर देना चाहिये एवं उसके पौधे के चारों तरफ जुताई करना चाहिये, जिससे कोषस्थ कीट का प्राकृतिक शत्रु सूर्य का प्रकाश या रोशनी के संपर्क मे आकर नष्ट हो सके।

- प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (0.2-0.25 प्रतिशत) का छिड़काव मेजबान या पोषित पौधे पर करे, जिससे वयस्क मक्खी मर जायें।
- लकड़ी के ब्लाक को इथेनॉल, मेथिल, यूगेनाल एवं मैलाथियान को 6:4:1 के अनुपात मे मिश्रित घोल को तैयार करके ब्लाक के मिश्रण में भिगोकर 10 ट्रेप प्रति हेक्टेयर की दर से पौधे में 72 घंटो के लिये लटका या टांग देना चाहिए।
- **छाल खाने वाली इल्लीः** इल्ली प्रमुख रूप से तना, डंठल एवं शाखाओं को खाती है। इस इल्ली के प्रकोप या संक्रमण से, मुखना- उंठल शाखाओं एवं टहनी में अनियंत्रित सुरंग एवं धब्बे बन जाते है, ये सुरंग रेशेदार धागे एवं विष्टा या मलमूत्र के मित्रण से ढका हुआ होता है, सामान्य रूप से टहनियों एवं शाखाओं के जोड़ो पर आश्रय छिद्र का पाया जाना आम बात होता है, गंभीर संक्रमण होने पर नई टहनिया सूखने लगती है एवं मर जाती है।
- **प्रबंधनः** उद्यान को स्वच्छ एवं स्वस्थ बनाये रखना चाहिये, बोरर छिद्र मे नेचुरेलिस-एल (0.40 प्रतिशत) का कोनीडियल सस्पेंशन का प्रयोग प्रभावी होता है।
- यांत्रिक रूप से लोहे की छड़ को छिद्र में डालकर इल्ली को मारा जा सकता है, उसके बाद रुई या ऊन को डाईक्लोरोवास के 0.25-0.5 प्रतिशत के घोल मे भिगोकर छिद्र को बंद कर देना चाहिये, उसके पश्चात् छिद्र को गीली मिट्टी से बंद कर देना चाहियें।

निष्कर्ष

अमरूद की उत्पादन प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन के इस लेख के माध्यम से हमने देखा कि यह फल भारतीय कृषि के लिए एक महत्वपूर्ण फसल है। इसकी खेती के लिए उचित भूमि, उर्वरक, जल प्रबंधन, रोग एवं कीट प्रबंधन, पौधों की कटाई एवं छटाई, पौधों का आकार या संरचना का प्रबंधन और सही तकनीकी प्रबंधन की आवश्यकता होती है। उच्च गुणवत्ता वाले बीजों और किस्मो का चयन, समय-समय पर सिंचाई और सही संचालन फसल की सफलता के लिए आवश्यक होता हैं। इसके अलावा तकनीकी सहायता और वैज्ञानिक तथ्यों का उपयोग करना भी फसल के उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देता है।

अमरूद की खेती में सफलता प्राप्त करने के लिए विभिन्न संशोधन, प्रौद्योगिकी और प्रबंधन तकनीकों का उपयोग किया जा सकता है। इसके अलावा विशेषज्ञों द्वारा दी गई जानकारी को अपनाना फल की खेती मे वृद्धि दिलाने में मदद कर सकता है।

संदर्भ

- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, "अमरूद की खेती का तकनीकी प्रबंधन," अगस्त 2023.
- श्रीमाल, अनिल और वर्मा, विवेक, "अमरूद की उत्पादन प्रौद्योगिकी," फल परिषद जर्नल, वॉल. 25, नं. 3, 2021, पृ, 102-110.

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सेमल: लाल फूलों से अधिक प्रकृति का अनसुना वरदान

स्वप्निल श्रीवास्तव[1*] एवं अमृत वर्षिणी[2]

[1]कृषि जैवप्रौद्योगिकी विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ

[2]विस्तार शिक्षा विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या

पत्राचारकर्ता: srivastavaswapnil50@gmail.com

परिचय

सेमल (रेशम कपास) पेड़ बड़े व लाल फूलों वाला एक प्रकार का देशी कपास का पेड़ है। यह 30 मीटर तक की ऊँचाई और 3-4 मीटर की परिधि तक पहुँचने के लिए तेजी से बढ़ता है। पेड़ की पत्तियाँ 5-8 लेंस के आकार के पत्रक के साथ यौगिक हैं। पत्तियों का एक अनूठा रूप होता है, जो पेड़ को दूसरों से अलग करता है। इस पेड़ पर सुंदर लाल रंग के फूल होते हैं, जो पूरे परिदृश्य को एक मंत्रमुग्ध कर देने वाले लाल रंग में रंगते हैं। कुछ महीनों के सुंदर फूलों के प्रदर्शन के बाद पौधा बड़ी संख्या में पिंग-पोंग बॉल आकार के फल पैदा करता है। फलों में कई बीज होते हैं, जो रेशे की तरह कपास की घनी चटाई से घिरे होते हैं। इन रेशों को पेड़ के चारों ओर तैरते हुए देखा जा सकता है, जब फल सूख जाता है और बीज फैलते हुए खुल जाता है। ग्रामीण इन रेशों के लिए फल एकत्र करते हैं और 'कोपाक' नामक कपास पदार्थ निकालते हैं।

रेशे लगभग शुद्ध सेलूलोज़ होते हैं और उनकी तापीय चालकता कम होती है, लेकिन वे खुद को कताई के लिए उधार नहीं देते हैं। इसलिए, उनका उपयोग इन्सुलेशन, किफायती कीमत वाले तकिए, स्लीपिंग बैग, गद्दे, सोफे आदि भरने के लिए किया जाता है। यह अपने सुंदर लाल फूलों और इसकी छाया के कारण पार्कों और सड़कों के किनारे व्यापक रूप से लगाया जाता है।

भौतिक विवरण

रेशम का सूती पेड़ या सेमल पेड़, एक बड़ा, तेजी से बढ़ने वाला पेड़ है, जिसमें एक चौड़ी, फैली हुई चंदवा होती है। इसमें एक सीधा, मजबूत तना और एक खुरदरा, गहरे रंग की छाल होती है। पेड़ के पत्ते बड़े और चमकदार होते हैं, और इसमें सुंदर, लाल फूलों के गुच्छे होते हैं, जो गर्मियों में खिलते हैं।

फूल खिलने के बाद, पेड़ कपास जैसे पदार्थ वाले लंबे, रसीले बीज की फली पैदा करता है। बीज की फली पहले हरे रंग की होती है और परिपक्व होने पर भूरे रंग की हो जाती है। यह पेड़ अपने विशिष्ट, तीखे लाल फूलों और रसीले बीज की फली के लिए जाना जाता है, जो इसे एक अद्वितीय और आकर्षक रूप देता है।

अपने सजावटी मूल्य के अलावा, रेशम का सूती पेड़ अपने औषधीय गुणों के लिए भी बेशकीमती है। पेड़ की छाल, पत्तियों और बीजों का उपयोग पारंपरिक चिकित्सा में बुखार, दस्त और त्वचा की स्थिति सहित विभिन्न बीमारियों को ठीक करने के लिए किया जाता है। इस पेड़ का उपयोग घावों और कटाव के लिए प्राकृतिक उपचार के रूप में भी किया जाता है।

सेमल पेड़ प्रसार

सेमल पेड़ों को बीज या आधी पके हुए लकड़ी की कटाई द्वारा प्रचारित किया जा सकता है। बिना किसी पूर्व-उपचार के ताजा बोने पर बीजों में अंकुरण की दर अधिक होती है। हालांकि, कुछ रिपोर्टों से पता चलता है कि बुवाई से पहले 12 घंटे तक बीजों को भिगोने से अंकुरण दर में सुधार हो सकता है, विशेष रूप से उन बीजों के लिए, जो कुछ हद तक सूख चुके हैं। बीजों को धूप वाली स्थिति में या तो वांछित स्थान पर या नर्सरी बेड में बोया जा सकता है। अंकुरण आमतौर पर 10 से 25 दिनों के भीतर होता है।

एक बार जब पौधे 5 सेमी की ऊँचाई तक पहुँच जाते हैं, तो उन्हें अलग-अलग पात्रों में प्रत्यारोपित किया जा सकता है और उन्हें उनके स्थायी स्थान पर लगाने से पहले 12 महीने तक उगाया जा सकता है।

प्रसार के लिए आधी पकी लकड़ी की कटाई का भी उपयोग किया जा सकता है।

सेमल वृक्ष उगाने के लिए, इन चरणों का पालन करें:

क. एक स्थान चुनें: सेमल के पेड़ को पूर्ण सूर्य के संपर्क और अच्छी तरह से निकालने वाली मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसे निचले इलाकों में लगाने बचना चाहिए, जिससे पेड़ो में पाला न लग सके।

ख. एक पेड़ खरीदें: आप नर्सरी या ऑनलाइन से एक सीमल ट्री खरीद सकते हैं। ऐसी किस्म चुनना सुनिश्चित करें, जो आपकी जलवायु के अनुकूल हो।

ग. पेड़ लगाएं: पेड़ लगाते समय, जड़ों को समायोजित करने के लिए एक चौड़ा और गहरा छेद खोजना सुनिश्चित करें। पेड़ को छेद में रखें और इसे मिट्टी से भरें, किसी भी हवा की जेब को हटाने के लिए इसे धीरे से नीचे करें। रोपण के बाद पेड़ को अच्छी तरह से पानी दें।

सेमल के फूल एवं बीज

देखभाल के सुझाव

क. पानी: सेमल पेड़ को फलने-फूलने के लिए बहुत पानी की आवश्यकता होती है, विशेष रूप से गर्म, शुष्क अवधि के दौरान। मौसम के आधार पर सप्ताह में एक या दो बार पेड़ को गहराई से पानी दें।

ख. उर्वरक: वसंत ऋतु में और फिर शरद ऋतु में एक संतुलित उर्वरक के साथ पेड़ को उर्वरक दें। अत्यधिक निषेचन से बचना सुनिश्चित करें, क्योंकि इससे फूल और बीज फली के उत्पादन की कीमत पर अत्यधिक पत्ते पड़ सकते हैं।

ग. छँटाई और प्रशिक्षण: किसी भी पार या क्षतिग्रस्त शाखाओं को हटाने के लिए पेड़ की सालाना छँटाई करें।

घ. मल्च: नमी को बचाने और खरपतवारों को दबाने के लिए पेड़ के आधार के चारों ओर मल्च करें।

ड.. कीट नियंत्रण: सेमल के पेड़ो मे एफिड और स्केल जैसे कीटों का अधिक खतरा रहता है, इसलिए यदि आप किसी भी कीट को देखते हैं, तो नियंत्रण के प्राकृतिक तरीकों का उपयोग करने का प्रयास करें, जैसे कि शिकारियों को पेश करना या बागवानी तेल या साबुन का उपयोग करना।

य. रोकथाम: सेमल के पेड़ को कुछ बीमारियों का खतरा हो सकता है, जैसे कि फफूँदी और पत्ते का धब्बा। इन बीमारियों को रोकने के लिए, ऊपर से पानी डालने से बचें, पेड़ की अच्छी तरह से कटाई करें और संक्रमित शाखा को हटा दें।

पारिस्थितिक महत्व

शैल मधुमक्खियों का संरक्षण: सेमल एक अभिन्न प्रजाति है, जो वन पारिस्थितिकी तंत्र को एक साथ रखती है। शैल मधुमक्खियाँ इसकी शाखाओं पर निवास करती हैं क्योंकि पेड़ के स्पाइक्स इसके शिकारी, सुस्ती भालू को दूर रखते हैं।

भोजन: जनजातीय समुदाय मानसून के दौरान भोजन के रूप में इसकी लाल जड़ों का सेवन करते हैं।

पतंगो के लार्वा के लिए भोजन: पत्तियाँ बुकुलाट्रिक्स क्रेटेरैक्मा नामक पतंगे प्रजाति के लार्वा के लिए भोजन हैं।

बीज का महत्व: बीजों का उपयोग सुनहरे मुकुट वाली गौरैयों द्वारा अपने बीजों से सफेद कपास के साथ घोंसले के अस्तर के लिए किया जाता है।

आश्रय प्रदान करता है: फूलों में अमृत विभिन्न प्रजातियों जैसे डिसडर्कस कीड़े, भारतीय क्रेस्टेड साही और हनुमान, लंगूर को आकर्षित करता है।

वन ट्री वाइल्डलाइफ सेंक्चुरी: चूँकि, यह पेड़ चट्टान की मधुमक्खियों, सुनहरे मुकुट वाली गौरैया, भारतीय क्रेस्टेड साही और हनुमान लंगूर सहित विभिन्न वन्यजीव प्रजातियों को सहारा देता है। यह 'एक पेड़ वाले वन्यजीव अभयारण्य' के रूप में कार्य करता है।

सांस्कृतिक और सामाजिक महत्व

क्षेत्र की गरसिया जनजाति का भी मानना है कि वे सेम के पेड़ों से निकले हैं। काथोडी जनजाति इसकी लकड़ी का उपयोग संगीत वाद्ययंत्र बनाने के लिए करती है जबकि भील जनजाति का उपयोग बर्तन बनाने के लिए किया जाता है।

आदिवासी समुदायों के सदस्य मानसून के दौरान भोजन के लिए पेड़ की लाल जड़ का सेवन करते हैं। शलभ बुकुलाट्रिक्स

क्रेटेरैक्मा का लार्वा इसकी पत्तियों को खाता है।

प्रतिवर्ष उदयपुर में, होली की पूर्व संध्या पर, रेशम सूती पेड़ या सेमल नामक एक विशेष पेड़ का उपयोग करके एक अलाव उत्सव मनाया जाता है। दक्षिणी राजस्थान में भील और गरसिया जैसे स्थानों पर बड़ी मात्रा में सेमल काटा जाता है और उदयपुर में बेचा जाता है। कटाई राजस्थान वन अधिनियम, 1953 से लेकर वन (संरक्षण) अधिनियम 1980 तक कई कानूनों का उल्लंघन करती है।

संरक्षण की चुनौतियां

होलिका दहन समारोह के लिए वृक्ष कटाईः प्रतिवर्ष, कानूनी सुरक्षा के बावजूद, उदयपुर में होलिका दहन समारोह के लिए लगभग 1,500-2,000 सेमल के पेड़ या शाखाएं काट दी जाती हैं।

सेमल पेड़ के कभी प्रचुर मात्रा में पाए जाने वाले लाल रंग के फूल अब शायद ही कभी देखे जाते हैं, जो अत्यधिक कटाई के कारण इसकी आबादी में गिरावट का संकेत देते हैं।

जनजातीय सदस्यों के लिए आर्थिक अवसर

जनजातीय समुदाय आय के लिए छोटे कृषि भूखंडों, पशुधन और शारीरिक श्रम पर निर्भर करते हैं।

वे बांस, पोंगामिया पिन्नाटा के बीज और महुआ के फूल जैसे छोटे वन उत्पादों को इकट्ठा करते हैं और बेचते हैं।

कुछ आदिवासी सदस्य सीमल के पेड़ों को काटने में शामिल हैं। वे इसे एक आर्थिक अवसर के रूप में देखते हैं क्योंकि जंगली पेड़ों की कटाई के लिए फसलों की खेती की तुलना में कम प्रयास और लागत की आवश्यकता होती है।

उच्च शहरी मांगः सेमल पेड़ों की उच्च मांग है, विशेष रूप से बड़े होलिका दहन कार्यक्रमों की मेजबानी करने वाले शहरी क्षेत्रों के कारण दक्षिण राजस्थान के जंगलों से सीमल के पेड़ गायब हो गए हैं।

औपचारिक प्रलेखन की कमाः 2009 में किए गए एक अध्ययन के बाद से इस विषय पर बहुत कम औपचारिक प्रलेखन या शोध हुआ है।

संरक्षण के प्रयास

सेमल वृक्ष संरक्षण मिशनः 2008 में, यह मिशन सोसाइटी फॉर माइक्रोविटा रिसर्च एंड इंटीग्रेटेड मेडिसिन के तहत शुरू किया गया था।

इस मिशन में सेमल के पेड़ों के महत्व के बारे में जागरूकता बढ़ाने वाले पेशेवरों का एक विविध समूह शामिल है। वे होली के अलाव के लिए सेम के पेड़ों के बजाय लोहे के खंभे का उपयोग करने की भी वकालत करते हैं।

निष्कर्ष

सेमल का वृक्ष भारतीय उपमहाद्वीप के पारिस्थितिक तंत्र और संस्कृति में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसके विशाल आकार, आकर्षक लाल फूलो और बहुमुखी उपयोगिता ने इसे प्रकृति का एक अनमोल उपहार बना दिया है। यह वृक्ष न केवल जैव विविधता को समृद्ध करता है, बल्कि आदिवासी समुदायों के लिए आजीविका का एक महत्वपूर्ण स्रोत भी है। हालांकि, सेमल के वृक्ष आज गंभीर खतरे में हैं। होली के त्योहार के दौरान इनकी अंधाधुंध कटाई, शहरीकरण और वनों की कटाई ने इनकी संख्या में भारी गिरावट ला दी है। यह स्थिति चिंताजनक है, क्योंकि इसका प्रभाव न केवल पर्यावरण पर पड़ेगा, बल्कि स्थानीय समुदायों की संस्कृति और अर्थव्यवस्था पर भी गहरा असर डालेगा। सेमल के वृक्षों के संरक्षण के लिए तत्काल और व्यापक प्रयासों की आवश्यकता है। इसमें कानूनी सुरक्षा को मजबूत करना, जागरूकता अभियान चलाना, वैकल्पिक आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा देना और सामुदायिक वनीकरण कार्यक्रम शामिल हो सकते हैं। साथ ही, हमें परंपरा और पर्यावरण संरक्षण के बीच एक संतुलन बनाने की आवश्यकता है, जैसे कि होलीका के लिए लोहे के खंभों का उपयोग करना। अंत में, सेमल का वृक्ष हमें याद दिलाता है कि प्रकृति और संस्कृति कितनी गहराई से जुड़े हुए हैं। इस अद्भुत वृक्ष को बचाने का मतलब है कि हमारी विरासत, पारिस्थिति की और समृद्ध जैव विविधता को संरक्षित करना। यह एक ऐसा कार्य है जो न केवल भारत के लिए, बल्कि पूरे विश्व के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह हमारे ग्रह की समृद्ध जैव विविधता का एक अनूठा हिस्सा है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सोलेनेसियस सब्जियों का औषधीय महत्व

इमामुद्दीन शाह[1*], अजय कुमार[2], नीलिमा रावत[3] एवं हितैषी कुड़ियाल[4]

[1,3,4]सब्जी विज्ञान विभाग, जी. बी. पंत कृषि एंव प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखंड

[2]फल विज्ञान विभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दल्ली

पत्राचारकर्ता: imamuddin5shah@gmail.com

परिचय

टमाटर, आलू, बैंगन और मिर्च जैसी सोलेनेसियस सब्जियाँ न केवल वैश्विक पाक परंपराओं में, बल्कि चिकित्सीय लाभों के मामले में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये सब्जियाँ कई तरह के खनिज, एंटीऑक्सीडेंट और बायोएक्टिव रसायन प्रदान करती हैं, जो सामान्य स्वास्थ्य और तंदुरुस्ती को बढ़ावा देते हैं। टमाटर अपनी उच्च लाइकोपीन सामग्री के लिए जाने जाते हैं, एक एंटीऑक्सीडेंट जिस पर प्रोस्टेट कैंसर और हृदय रोग के जोखिम को कम करने में इसकी भूमिका के लिए बड़े पैमाने पर शोध किया गया है। लाइकोपीन के अलावा, टमाटर में विटामिन सी और ए की मात्रा अधिक होती है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करते हैं और स्पष्ट दृष्टि को बढ़ावा देते हैं। आलू, कई संस्कृतियों में एक आम भोजन है, इसमें विटामिन सी और बी सिक्स, पोटैशियम और आहार फाइबर जैसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में होते हैं। इनमें कुकोमाइन होते हैं, जो रक्तचाप को कम करने के लिए जाने जाते हैं। आलू में मौजूद उच्च फाइबर सामग्री पाचन में सुधार करती है और स्वस्थ मल त्याग को बढ़ावा देती है। बैंगन अपने नासुनिन सांद्रता के लिए जाने जाते हैं, जो एक एंटीऑक्सीडेंट है, जो मस्तिष्क कोशिका झिल्ली को नुकसान से बचाता है। बैंगन में आहार फाइबर भी अधिक होता है, जो रक्त शर्करा के स्तर को प्रबंधित करने और पाचन स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करता है। बैंगन में शामिल फेनोलिक रसायन कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने के लिए सिद्ध हुए हैं, जिसके परिणामस्वरूप हृदय स्वास्थ्य में सुधार होता है। मिर्च, खास तौर पर तीखी मिर्च, कैप्साइसिन का एक बेहतरीन स्रोत है, जो चयापचय को बढ़ाने और दर्द से राहत दिलाने की अपनी क्षमता के लिए जाना जाता है। इसके अलावा, मिर्च विटामिन ए, सी और ई का एक बेहतरीन स्रोत है, जो स्वस्थ त्वचा और मजबूत प्रतिरक्षा प्रणाली के लिए आवश्यक हैं। अध्ययनों से पता चला है कि कैप्साइसिन संभवतः कैंसर कोशिकाओं के प्रसार को रोकने में शामिल हो सकता है।

सोलेनेसियस सब्जियों में औषधीय गुण

एंटीऑक्सीडेंट की प्रचुरता

सोलेनेसियस सब्जियाँ एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होती हैं, जो शरीर को ऑक्सीडेटिव तनाव और मुक्त कणों से होने वाले नुकसान से बचाती हैं। एंटीऑक्सीडेंट को कई स्वास्थ्य लाभों से जोड़ा गया है, जिसमें पुरानी बीमारियों का कम जोखिम भी शामिल है।

सूजन-रोधी सहयोगी

कुछ सोलेनेसियस सब्जियाँ सूजन-रोधी होती हैं, जो शरीर को सूजन से उबारने में सहायता करती हैं। चूँकि पुरानी सूजन कई बीमारियों से जुड़ी होती है, इसलिए सूजन-रोधी सब्जियाँ खाने से सुरक्षात्मक लाभ हो सकते हैं।

प्रतिरक्षा और स्वास्थ्य बूस्टर

सोलेनेसियस सब्जियाँ अपने आहार फाइबर सामग्री और नियमित मल त्याग को प्रोत्साहित करने की क्षमता के कारण प्रतिरक्षा और स्वास्थ्य बूस्टर के रूप में भी काम करती हैं और इन्हें पाचन स्वास्थ्य को बढ़ाने के लिए जाना जाता है। वे आंत के स्वास्थ्य का समर्थन कर सकती हैं और कब्ज को रोक सकती हैं। कुछ सोलेनेसियस सब्जियाँ विटामिन, खनिज और फाइबर जैसे आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति करके हृदय स्वास्थ्य को बनाए रखने में मदद करती हैं। वे कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करके, रक्तचाप को प्रबंधित करके और अन्य पहलुओं को नियंत्रित करके सामान्य रूप से हृदय स्वास्थ्य को बढ़ावा दे सकती हैं।

कैंसर विरोधी गुण

इन सब्जियों में फाइटोकेमिकल्स होते हैं जो कुछ प्रकार के कैंसर होने के आपके जोखिम को कम कर सकते हैं। ये फाइटोकेमिकल्स सूजनरोधी, एंटीऑक्सीडेंट और कैंसर विरोधी हो सकते हैं।

सोलेनेसियस सब्जियाँ

टमाटर

टमाटर में कई फाइटोकेमिकल्स होते हैं, जिनमें 60% से 64% लाइकोपीन, 10% से 12% फाइटोइन, 7% से 9% न्यूरोस्पोरिन और 10% से 15% कैरोटीनॉयड शामिल हैं। टमाटर और टमाटर आधारित भोजन में वैश्विक स्तर पर लाइकोपीन की सबसे अधिक मात्रा होती है। मनुष्य प्रतिदिन लगभग 25 मिलीग्राम लाइकोपीन का सेवन करते हैं, जिसमें ताजे और प्रसंस्कृत टमाटर उत्पादों का हिस्सा लगभग 85 प्रतिशत होता है। टमाटर में 0-6 से 0-2 मिलीग्राम/किलोग्राम कैरोटीन होता है, जो उन्हें अमेरिकी आहार में प्रो-विटामिन ए और विटामिन ए का चौथा सबसे बड़ा दाता बनाता है। टमाटर उत्पादों या अर्क का सेवन करने से कैंसर, हृदय रोग और यूवी प्रकाश से प्रेरित त्वचा एरिथेमा का जोखिम कम हो सकता है। हर हफ्ते दस या उससे अधिक टमाटर उत्पादों का सेवन करने से कैंसर के उन्नत चरणों के जोखिम में उल्लेखनीय कमी देखी गई है। लाइकोपीन युक्त टमाटर और टमाटर आधारित उत्पादों का सेवन करने से पेट और मलाशय के कैंसर का जोखिम कम होता है, उन व्यक्तियों की तुलना में, जो कम लाइकोपीन का सेवन करते हैं।

बैंगन

बैंगन में पाए जाने वाले महत्वपूर्ण फाइटोकेमिकल्स में नासुनिन जैसे फ्लेवोनोइड्स और क्लोरोजेनिक एसिड और कैफीन जैसे फेनोलिक पदार्थ शामिल हैं। बैंगन में प्राथमिक फाइटोकेमिकल को नासुसिन कहा जाता है, जिसे डेल्फिनिडिन -3-(कौमारोइलरुटिनोसाइड)-5- ग्लूकोसाइड के रूप में भी जाना जाता है। यह दिखाने के लिए सबूत हैं कि बैंगन उच्च रक्त कोलेस्ट्रॉल को प्रभावी ढंग से ठीक कर सकता है।

मिर्च

ताजी मिर्च विटामिन सी और के, साथ ही कैरोटीनॉयड और फ्लेवोनोइड्स से भरपूर होती है। तीखी मिर्च विटामिन और खनिजों की महत्वपूर्ण मात्रा प्रदान करती है। 100 ग्राम की एक खुराक में विटामिन सी (एस्कॉर्बिक अम्ल) की दैनिक अनुशंसित मात्रा का 240%, विटामिन बी सिक्स (पाइरिडोक्सिन) का 39%, विटामिन ए का 32%, आयरन का 13%, कॉपर का 14% और पोटैशियम का 7% होता है। फोलिक अम्ल और विटामिन गठिया और अस्थमा के लक्षणों के उपचार में सहायता कर सकते हैं। विटामिन K, थ्रोम्बिन को प्रोथ्रोम्बिन में परिवर्तित करके क्षति के बाद रक्त का थक्का बनाने में एक प्राकृतिक भूमिका निभाता है, जो थक्के बनाता है। विटामिन K की कमी से एनीमिया (खून की कमी) हो सकती है। मिर्च में फाइटोकेमिकल्स होते हैं, जो गैस्ट्रिक अल्सर, मधुमेह दर्द, दांत दर्द, मांसपेशियों में दर्द, न्यूरोपैथी, पोस्टमास्टेक्टॉमी दर्द सिंड्रोम, ऑस्टियोआर्थ-राइटिस, मूत्राशय अति संवेदनशीलता और स्पाइनल हाइपररिफ्ले-क्सिया सहित कई बीमारियों का इलाज कर सकते हैं।

आलू

बैंगनी आलू की त्वचा और मांस बैंगनी होते हैं, जो पकने पर नीले हो जाते हैं। आलू के प्रोटीन अच्छी गुणवत्ता के होते हैं, संभवतः उनमें लाइसिन और अन्य मेटाबोलाइट्स जैसे महत्वपूर्ण अमीनो अम्ल की उच्च सामग्री के कारण जो प्रोटीन उपयोग में सुधार करते हैं। आलू के कंद विटामिन सी की एक उचित मात्रा प्रदान करते हैं (10 से 104 मिलीग्राम/किग्रा तक) जो कि खेती और बढ़ते मौसम पर निर्भर करता है, हालांकि भंडारण और खाना पकाने के दौरान यह काफी कम हो जाता है (30 से 50 प्रतिशत)।

निष्कर्ष

औषधीय पौधों के रूप में सोलेनेसियस सब्जियाँ कम या बिल्कुल भी जहरीली नहीं होती हैं और इसलिए शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को बनायें रखने में एक बड़ी भूमिका निभाती हैं, जो मनुष्य की बीमारी का प्रतिरोध करने में मदद करती हैं। इनमें एंटीऑक्सीडेंट और रोगाणुरोधी गतिविधियाँ भी होती हैं, जो ऑक्सीडेटिव तनाव और उम्र से संबंधित मानव बीमारी के प्रबंधन में सहायक हो सकती हैं। इसलिए, सब्जी उत्पादन में वृद्धि अन्य फसलों की तुलना में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा को बेहतर बनाने में मदद कर सकती है।

❖❖

Pen to a Book

A Small journey from a pen to a book,
keeping the thoughts with their struggle.

STEP TO A STEP FOR PUBLICATION

1. SUBMIT YOUR BOOK ON OUR PORTAL OR SEND US ON E-MAIL
2. GET THE ISBN NUMBER
3. PUBLISH YOUR BOOK IN A E-BOOK PORTAL ALONG WITH FEW HARD COPIES
4. GET THE ROYALTY

agro India

Agro India Publications
Add. 5, Vivekananda Marg
Opp. Hotel R INN
Prayagraj – 211003

: 7505907954/9565006333
agroindiapublications@gmail.com

ISSN No. 2583-3316

प्राकृतिक खेती

गौरव शुक्ला[1] , खलील खान[2*] एवं वेद प्रकाश[3]

[1]मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विभाग, मेजर एस.डी. सिंह पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश

[2]मृदा विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान केन्द्र, दलीप नगर, कानपुर देहात, उत्तर प्रदेश

[3]मेजर एस.डी. सिंह पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, फर्रूखाबाद, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: khankhalil64@gmail.com

परिचय

खेती एक समग्र कृषि प्रणाली है, जो मृदा के पुनर्जन्म जल और वायु की गुणवत्ता में सुधार करने की पारिस्थितिकी तंत्र जैव विविधता को बढ़ाने व पोषक तत्वों से भरपूर भोजन उत्पादन करने और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में मदद करने के लिए कार्बन को एकत्र करने में मदद करती है, जिसमें केवल प्राकृतिक आदानों का उपयोग करते हैं।

प्राकृतिक खेती भारतीय परंपरा में निहित एक रसायन मुक्त खेती प्रणाली है। इसे कृषि पारिस्थितिकी की पुनर्चक्रण आधारित विविधतापूर्ण खेती प्रणाली माना जाता है, जो फसलों पेड़ पौधों और धन की कार्यात्मक जीव विविधता के साथ एकीकृत करती हैं।

प्राकृतिक खेती

प्राकृतिक खेती वह खेती है, जिसमें फसलों पर किसी भी प्रकार का रासायनिक कीटनाशक एवं उर्वरक का प्रयोग नहीं किया जाता है। सिर्फ प्राकृतिक रूप में प्रकृति द्वारा दी गई निर्मित उर्वरक और अन्य पेड़ पौधों के पत्ते की खाद, पशुपालन गोबर खाद का उपयोग में लाया जाता है, जो फसलों और जीव जन्तुवों एवं पेड़ों को एकीकृत करके रखती है।

प्राकृतिक खेती की आवश्यकता

पिछले कई वर्षों से रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग फसलों पर अधिक हो रहा है, जिससे मिट्टी की उर्वराशक्ति खत्म हो रही है एवं भूमि की प्राकृतिक स्वरूप में भी बदलाव हो रहे हैं, जो किसानों के साथ-साथ जन सामान्य के लिए भी काफी नुकसानदायक है, जहाँ रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से फसलों पर अधिक प्रभाव पड़ रहा है वहीं जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, भू-प्रदूषण भी बढ़ रहा है।

प्राकृतिक खेती का महत्व

प्राकृतिक खेती कृषि की प्राचीन पद्धति है यह भूमि के प्राकृतिक स्वरुप को बनाये रखती है जिसके निम्नलिखित महत्व इस प्रकार है।

उत्पादन की न्यूनतम लागत: इसे लागत प्रभावी कृषि पद्धति माना जाता है, जिसमें रोजगार सृजन और ग्रामीण विकास की संभावनाएं हैं।

बेहतर स्वास्थ्य सुनिश्चित करना: चूँकि प्राकृतिक खेती में किसी भी सिंथेटिक रसायन का उपयोग नहीं किया जाता है, इसलिए स्वास्थ्य जोखिम और अन्य खतरे समाप्त हो जाते हैं। भोजन में पोषण घनत्व अधिक होता है और इसलिए यह बेहतर स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है।

पानी की खपत में कमी: विभिन्न फसलों के साथ काम करके, जो एक-दूसरे की मदद करती हैं तथा वाष्पीकरण के माध्यम से अनावश्यक जल हानि को रोकने के लिए मिट्टी को ढकती हैं, प्राकृतिक खेती 'प्रति बूंद फसल' की मात्रा को अनुकूलित करती है।

मृदा का पुनर्जन्म: प्राकृतिक खेती का सबसे तात्कालिक प्रभाव मिट्टी के जीव विज्ञान पर पड़ता है, जैसे सूक्ष्म जीवों और केंचुओं व अन्य जीवों मिट्टी का स्वास्थ्य पूरी तरह से उसमें मौजूद जीवों पर निर्भर करता है।

पशुधन स्थिरता

कृषि प्रणाली में पशुधन का एकीकरण प्राकृतिक खेती में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और पारिस्थितिकी तंत्र को बहार करने में मदद करता है। जीवामृत और बीजामृत जैसे पर्यावरण अनुकूल जैव-इनपुट गाय के गोबर और मूत्र तथा अन्य प्राकृतिक उत्पादों से तैयार किए जाते हैं।

लचीलापन

कार्बनिक कार्बन, बिना या कम जुताई और पौधों की विविधता की मदद से मिट्टी की संरचना में परिवर्तन, गंभीर सूखे जैसी चरम स्थितियों में भी पौधों की वृद्धि का समर्थन कर रहे हैं और चक्रवातों के दौरान गंभीर बाढ़ और हवा से होने वाली क्षति को भी झेल रहे हैं।

प्राकृतिक खेती के फायदे

- किसानों की दृष्टि से लाभ
- भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है।
- सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है।
- रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत में कमी आती है।

फसलों की उत्पादकता में वृद्धि

- बाजार में जैविक उत्पादों (ORGANIC FOOD) की मांग बढ़ने से किसानों की आय में भी वृद्धि होती है।
- मिट्टी की दृष्टि से जैविक खाद के उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।

भूमि की जल धारण क्षमता में वृद्धि

- भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होगा और जलधारण की क्षमता बढ़ती है।
- पर्यावरण की दृष्टि से भूमि के जलस्तर में वृद्धि होती है। मिट्टी, खाद्य पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है।
- कचरे का उपयोग, खाद बनाने में प्रयोग किया जाता है, जिससे बीमारियों में कमी आती है।
- फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय में वृद्धि।
- अंतर्राष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद की गुणवत्ता का खरा उतरना।

प्राकृतिक खेती के अवयव

बीजामृत बनाने की विधि और फसल में इसका प्रयोग तथा लाभ

परिचय

प्राकृतिक खेती में बीजामृत से बीजों को रोक मुक्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है। बीजामृत से उपचारित किए हुए 100 में 90 बीज अंकुरित हो जाते हैं, जबकि रासायनिक दावों से उपचारित बीजों मे यह संख्या कम होती हैं।

बीजामृत बनाने के लिये आवश्यक सामग्री

सामग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	05 किग्रा.
देशी गाय का गौमूत्र	05 ली.
पानी	20 ली.
चूना	50 ली.
मिट्टी (पीपल या बरगद के पेड़ के नीचे की मिट्टी)	50 ग्रा.

निर्माण विधि

देशी गाय के गोबर, मूत्र, पानी को एक बर्तन में घोल लें अब दूसरे बर्तन में एक 1/2 लीटर पानी और 50 ग्राम चूने का घोल लें, दोनों मिश्रण को ढककर 24 घंटे के लिए रख देते हैं। 24 घंटे बाद दोनों मिश्रण को एक कपड़े से छान लेते हैं, अब यह बीजामृत 100 किलोग्राम बीजों को उपचारित करने के लिए पर्याप्त है।

प्रयोग विधि

क. बीजामृत को गेहूँ के बीज के ऊपर छिड़कते हुए दानों को हल्के-हल्के मिलाते रहे।

ख. इसके बाद बीजों को छॉव में सुखाकर बुवाई कर देते हैं।

ग. जिस पानी में धान के बीजों को अंकुरित होने के लिए रखा जाता उसे पानी में बीजामृत डाल दें।

घ. अंकुरित होने के बाद नर्सरी में लगा दें।

ड. दालों एवं कोमल स्वभाव वाले बीजों के लिए बीजामृत तैयार करते समय चूने का प्रयोग न करें।

बीजोपचार हेतु नुस्खे

बीजामृत का प्रयोग बीज शोधन के लिए किया जाता है बीज शोधन का अर्थ है। बीजों को बीज जनित या मृदा जनित रोगों से बचाव हेतु तैयार करना। बहुत से रोग बीजों के माध्यम से फैलते हैं, जिनसे फसल को बचाना बहुत महत्वपूर्ण हैं। रोग जनित बीमारियों का इलाज बीज शोधन से ही संभव है लेकिन आज भी अधिकांश किसान बिना उपचारित बीज से ही खेत की बुवाई करते हैं। बीज उपचार बीजों के अंकुरण क्षमता को वृद्धि करता है। बीजोपचार बीजों के अंकुरण क्षमता में वृद्धि करता है। बीज शोधन से बीज जल्द एवं अधिक संख्या में उगते हैं। पौधों की जड़े तीव्र गति से बढ़ती हैं और मृदा जनित रोगों से फसलों में बीमारियों का प्रकोप नहीं होता है।

बीजामृत के घोल से बीजों को उपचारित करने के उपरान्त ढककर रख देते हैं तत्पश्चात् इनकों छाव में सुखा लेते हैं। बीजामृत से शोधित किये हुए बीज जल्दी और ज्यादा मात्रा में जमाव होता है। भूमि में लगने वाली बीमारियाँ कम होती है। पौधे अच्छी तरह से फलते और फूलते हैं। केले और गन्ने की बुवाई में भिगोने से तुरन्त बाद लगना चाहिए और अगर धान, टमाटर, बैंगन या किसी प्रकार की पौध लगानी है तो उसकी जड़े बीजामृत में डुबोए तत्पश्चात् पौध को खेत में रोपाई करनी चाहिए।

चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय के अधीन समस्त कृषि विज्ञान केन्द्रों पर प्राकृतिक खेती हेतु बीजामृत का उपयोग किया जा रहा है एवं कृषकों को बीजामृत के उपयोग एवं बनाने

की विधि का प्रदर्शन कर केन्द्र पर आने वाले जनपदीय कृषकों को गोष्ठियों के माध्यम से जागरूक कर लाभान्वित किया जा रहा हैं।

जीवामृत बनाने की विधि एवं फसलों में इसका प्रयोग तथा लाभ

परिचय

दिन प्रतिदिन खेती की लागत में वृद्धि हो रही है, जिससे किसानों की आय पर प्रभाव पड़ रहा है। इसलिये किसान अब प्राकृतिक खेती की ओर रूख कर रहे हैं। क्योंकि खेती का यही एक मात्र टिकाऊ और सस्ता उपाय हैं। इससे खेत की उर्वराशक्ति बनी रहती है साथ में महँगे रसायनिक उर्वरकों, खरपतवारनाशी और कीटनाशकों से छुटकारा मिलता है। खेती में कृषि रसायनों का अंधाधुंध प्रयोग करने के कारण जीवांश कार्बन की कमी होती जा रही है। रसायनों का वातावरण पर भी बुरा प्रभाव पड़ रहा है, जिससे कि हमारा जल विषाक्त और वातावरण प्रदूषित हो रहा है। प्राकृतिक कृषि वह पद्धति है, जिसमें देशी गाय के गोबर एवं मूत्र का प्रयोग करते हुये बीजामृत, जीवामृत, पंचगव्य, नीमास्त्र, संजीवक आदि का उपयोग करते हुये खेती करते हैं। जीवामृत लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं का भण्डार है इसमें लाभदायक सूक्ष्म जीव एजोस्पाइरिलम, स्यूडोमोनास, ट्राइकोडर्मा, पीएसबी, यीस्ट एवं मोल्ड आदि पाये जाते हैं। जीवामृत पौधों के लिये आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने में अहम भूमिका निभाती है। यह मिट्टी में प्राकृतिक गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिये एक उत्प्रेरक का कार्य करता है। जीवामृत को बहुत ही आसानी से आवश्यकतानुसार बनाया जा सकता है।

जीवामृत बनाने की विधि

जीवामृत बनाने के लिये निम्नलिखित सामग्री की आवश्यकता होती है।

जीवामृत बनाने के लिये आवश्यक सामग्री

सामग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	10 किग्रा.
देशी गाय का गौमूत्र	05-10 ली.
पानी	200 ला.
गुड़	01 किग्रा.
बेसन या किसी भी दलहन का आटा	01 किग्रा.
मिट्टी (खेत के मेड़ की या पीपल/ बरगद के पेड़ के नीचे की मिट्टी)	50 ग्राम (एक मुट्ठी)

जीवामृत बनाने की विधि

जीवामृत बनाने के लिये 225 ली. प्लास्टिक के ड्रम की आवश्यकता होती है। इसमें 200 ली. पानी लेकर फिर उसमें 5 से 10 ली. गौमूत्र मिलायें तत्पश्चात् मिश्रण में 10 किग्रा. देशी गाय का गोबर, 01 किग्रा0 गुड़, 01 किग्रा. बेसन और 50 ग्राम (एक मुट्ठी) मिट्टी को मिलाने के बाद मिश्रण को लकड़ी के डण्डे की सहायता से अच्छी तरह मिला लेते हैं। इस घोल को 2 से 3 दिनों तक सड़ने (किण्वन) के लिये छाया में रखते हैं। प्रतिदिन इस घोल को 2 बार सुबह-शाम घड़ी की सुई की दिशा में लकड़ी के डण्डे से 2 मिनट तक घोलना होता है। घोलने के बाद जीवामृत को जूट की बोरी या सूती कपड़े से ढक देते हैं। इसे वर्षा के पानी तथा सूर्य के प्रकाश से बचाये। 3 से 4 दिन के अन्दर जीवामृत तैयार हो जाता है। जिसे एक सप्ताह तक प्रयोग कर लेने से लाभकारी होता है।

सावधानियाँ

जीवामृत बनाते समय विभिन्न प्रकार की सावधानियाँ बरतनी चाहिए, जो कि निम्नलिखित हैः

क. देशी गाय के गोबर का इस्तेमाल करें, गोबर जितना ताजा होगा उतना ही सर्वोत्तम है। गोबर 7 दिनों तक प्रभावशाली होता है। यदि आपके पास बैल हैं तो आधा गोबर बैल का मिला सकते हैं लेकिन इस बात का ध्यान रखें अकेले बैल का गोबर प्रयोग न करें।

ख. गौमूत्र जितना पुराना हो उतना ही उत्तम है (भैंस, जर्सी, होल्स्टीन का मूत्र वर्जित है)।

ग. पुराना गुड़ सबसे अच्छा होता है। यदि गुड़ उपलब्ध न हो तो एक ली. गन्ने का रस या 2 किग्रा. गन्ने के छोटे छोटे टुकड़े काटकर डाल सकते हैं या 400 ग्राम पके हुए फलों के गूदे का प्रयोग किया जा सकता है।

घ. सोयाबीन, मूंगफली अथवा अन्य ज्यादा तेल वाली दलहनों के बीजों से तैयार किये गये बेसन का उपयोग कदापि न करें। खेत के मेड़ की मिट्टी या पेड़ के नीचे की मिट्टी जहाँ किसी भी प्रकार के रसायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों एवं खरपतवारनाशी का उपयोग न किया गया हो उस मिट्टी का चुनाव करना चाहिए, क्योंकि इसमें विभिन्न प्रकार के उपयोग जीवाणु उपस्थित रहते हैं।

जीवामृत प्रयोग करने की विधि

जीवामृत का प्रयोग सिंचाई के पानी के साथ सीधा भूमि की सतह पर दो पौधों के बीच एवं खड़ी फसल पर छिड़काव किया जाता है। जीवामृत का प्रयोग महीने में 1 या 2 बार उपलब्धता

के अनुसार 200 ली. प्रति एकड़ के हिसाब से सिंचाई के पानी के साथ किया जा सकता है। बगीचों में फलों के वृक्षों के पास दोपहर 12:00 बजे छाँव पड़ती है। उस छाँव के पास प्रति पेड़ 2 से 5 ली. जीवामृत महीने में एक या दो बार गोलाकार थालों में डाला जा सकता है। जीवामृत का प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखें कि भूमि में नमी हो। खड़ी फसलों पर जीवामृत का पहला छिड़काव बीज बोवाई के 21 दिनो बाद प्रति एकड़ पर 100 ली. पानी और 5 ली. जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें एवं दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 ली. पानी और 20 ली. जीवामृत को मिलाकर छिड़काव करें। साथ ही तीसरा छिड़काव दूसरे छिड़काव के 21 दिन बाद प्रति एकड़ 200 ली. पानी में 20 ली. जीवामृत मिलाकर छिड़काव करें।

जीवामृत से लाभ

जीवामृत खेत में उपलब्ध जैव अवशेष के विघटन हेतु एक प्रभावी जैव नियामक है। यह पौधों को मुख्य तथा सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्ध कराने के साथ-साथ कीट रोग निवारण में भी सहायक है, क्योंकि जीवामृत फसलों में कीट एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा कृषि उत्पाद गुणवत्तापरक उत्पादित होता है। जीवामृत लाभदायक सूक्ष्म जीवाणुओं का भण्डार है। इसमें लाभदायक सूक्ष्म जीवाणु एजोस्पाइरिलम, स्यूडोमोनास, ट्राइकोडर्मा, पी.एस.बी, यीस्ट एवं मोल्ड आदि पाये जाते हैं। जीवामृत जब सिंचाई के साथ खेत में डाला जाता है, तो भूमि में जीवाणुओं की संख्या में अविश्वसनीय बढ़ोत्तरी होती है। साथ ही भूमि की भौतिक, रसायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि होती है। जीवामृत के उपयोग से मिट्टी स्वस्थ रहती है और फसल भी उतनी ही बेहतर होती है। इससे किसानों के मित्र कहे जाने वाले केचुओं की संख्या भी बढ़ती है।

घनजीवामृत बनाने की विधि और फसलों में इसका प्रयोग तथा लाभ

परिचय

आज की जीवन शैली में रसायनिक खादों एवं कीटनाशकों के अधिक उपयोग से भूमि बंजर हो रही है, जिससे मृदा का जीवांश कार्बन निम्न स्तर पर जा रहा है। इसलिये आज के समय में जरूरी हो गया है कि हम घनजीवामृत का उपयोग कर फिर से अपनी मिट्टी की सेहत सुधारें और प्राकृतिक खेती के प्रयोग से फसलोत्पादन करें। घनजीवामृत एक अत्यन्त प्रभावशाली जीवाणुयुक्त सूखी खाद है, जिससे देशी गाय के गोबर में कुछ अन्य चीजें मिलाकर अन्य चीजें मिलाकर बनाया जाता है। घनजीवामृत को बोवाई के समय खेत में पानी देने के 3 दिन बाद प्रयोग कर सकते हैं।

घनजीवामृत बनाने की विधि

घनजीवामृत बनाने के लिये 100 किग्रा. देशी गाय के गोबर को किसी पक्के फर्श पर फैलायें। अब 2 किग्रा. देशी गुड़, 2 किग्रा. बेसन और सजीव मिट्टी का मिश्रण बनाकर अब थोड़ा-थोड़ा गौमू. डालकर अच्छी तरह गूंथ लेंगे जिससे उसका घनजीवामृत बन जायेगा। अब इस तरह तैयार मिश्रण को छाया में 48 घण्टों के लिये अच्छी तरह सुखाकर बोरे से ढक देते हैं। 48 घण्टे बाद इस मिश्रण का चूर्ण बनाकर भण्डारित कर लेते हैं। घनजीवामृत को 6 महीने तक प्रयोग कर सकते हैं।

घनजीवामृत बनाने के लिए आवश्यक सामग्री-

सामग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	100 किग्रा.
देशी गाय का गौमूत्र	05 ली.
गुड़	2 किग्रा.
बेसन	2 किग्रा.
मिट्टी (बरगद या पीपल के पेड़ के नीचे की मिट्टी)	1 किग्रा.

घनजीवामृत का प्रयोग

घनजीवामृत का उपयोग किसी भी फसल में कर सकते हैं, घनजीवामृत का उपयोग बहुत ही आसान है, इसके प्रयोग के लिये प्रति एकड़ 100 किग्रा. सूखा देशी गाय के गोबर की खाद के साथ 20 किग्रा. घनजीवामृत बुवाई के समय खेत में डालते हैं। घनजीवामृत का उपयोग खेत में पानी देने के 3 दिन बाद भी कर सकते हैं।

घनजीवामृत से लाभ

घनजीवामृत के लाभ निम्नलिखित है

- घनजीवामृत के प्रयोग से किसान रसायनिक खेती की अपेक्षा अधिक फसल उत्पादन ले सकते हैं।
- घनजीवामृत से बीजों का अंकुरण अधिक मात्रा में होता है।
- घनजीवामृत के उपयोग से फसलों के दानों की चमक और स्वाद दोनों ही बढ़ते हैं।
- घनजीवामृत के उपयोग से जैसे ही मिट्टी में नमी आती है, इसमें उपस्थित जीवाणु सक्रिय हो जाते हैं और मिट्टी की उपजाऊ क्षमता कई गुना बढ़ा देते हैं।
- घनजीवामृत के उपयोग से पौधों में रोग प्रतिरोध क्षमता बढ़ती है।

• घनजीवामृत के उपयोग से फसल को आवश्यकता से अधिक गर्मी या ठंडी सहन करने की शक्ति प्रदान करता है।

• घनजीवामृत में ऐसा कोई तत्व नहीं होता जो किसी भी फसल को हानि पहुँचायें।

इस प्रकार किसान भाई कम लागत में अधिक उत्पादन ले सकते हैं। तो आइये हम सभी प्राकृतिक खेती अपनायें और स्वयं के साथ ही मिट्टी की सेहत बनायें।

नीमास्त्र बनाने की विधि और फसलों में इसका प्रयोग तथा लाभ

परिचय

नीमास्त्र एक कीटनाशक है, जिसे नीम की हरी पत्तियों या सूखे फल, गौमूत्र, गोबर एवं पानी की सहायता से बनाया जाता है। इसका इस्तेमाल फसलों में लगने वाले कीटों के नियंत्रण के लिये किया जाता है। नीमास्त्र रस चूसने वाले कीड़ों, छोटी सूडियो/इल्लियाँ के लिये उपयोगी है।

नीमास्त्र बनाने के लिये आवश्यक सामग्री

सामग्री	मात्रा
देशी गाय का गोबर	01 किग्रा.
देशी गाय का गौमूत्र	05 ली.
पानी	100 ली.
नीम की हरी पत्तियाँ/सूखे फल	5 किग्रा.

नीमास्त्र बनाने की विधि

नीमास्त्र को आसानी से घर पर बनाया जा सकता है। इसे बनाने के लिये कुछ सामग्री की आवश्यकता होती है। अगर यह सामग्री उपलब्ध हो तो इसे कोई भी आसानी से बना सकता है।

200 ली. प्लास्टिक के ड्रम में नीम की पत्ती एवं सूखे फलों को कूटकर पानी में मिलाएँ तत्पश्चात् देशी गाय का गोबर और गौमूत्र का मिश्रण मिला लें। मिश्रण को 48 घंटे बोरे से ढककर सुबह शाम घड़ी की सुई की दिशा में घुमायें तत्पश्चात् कपड़े से छानकर फसलों पर छिड़काव करें।

सावधानियाँ

• नीमास्त्र को छाँव में रखें और धूप से बचायें।

• इस बात का ध्यान रखें कि नीमास्त्र पर वर्षा का पानी न पड़े।

• गौमूत्र को प्लास्टिक के बर्तन/ड्रम में रखें।

प्रयोग करने अवधि

नीमास्त्र का प्रयोग 6 महीने तक कर सकते हैं, यानि कि इसे 6 महीने तक भंडारित करके रख सकते हैं।

नीमास्त्र का प्रयोग

नीमास्त्र का प्रयोग फसलों में रस को चूसने वाले कीड़ों, छोटी सूड़ियों/इल्लियों के लिये किया जाता है, जब फसलों में चूसन वाले कीड़े, छोटी सूड़िया/इल्लियों का प्रकोप दिखे तो नीमास्त्र का छिड़काव करके इन कीड़ो पर नियंत्रण पाया जा सकता है। तैयार नीमास्त्र को अच्छे से छानकर फसलों पर छिड़काव करते हैं।

नीमास्त्र से लाभ

नीमास्त्र से फसलों को काफी लाभ होता है। क्योंकि नीमास्त्र को आसानी से घर पर तैयार किया जा सकता है। नीमास्त्र को तैयार करने में जो सामग्री लगती है वो सामग्री किसानों को आसानी से उपलब्ध होती है। किसानों को इन सामग्री को खरीदने की जरूरत नहीं होती है। जिससे किसानों को इसे बनाने में कुछ भी खर्च करने की जरूरत नहीं पड़ती है और किसान आसानी से एक अच्छा कीटनाशक तैयार कर लेते हैं, जिससे फसलों पर लगने वाले कीड़ों पर आसानी से नियंत्रण पाया जा सकता है। यह किसानों को मंहगे रसायनिक कीटनाशकों से छुटकारा दिलाता है, जिससे कि किसानों को रसायनिक कीटनाशकों को खरीदने पर होने वाले व्यय में कमी आती है।

अग्नि अस्त्र

रस चूसने वाले कीड़े, छोटी सूडियो/इल्लियाँ होने पर नियंत्रण।

• 20 ली. देशी गाय का गौमूत्र।

• 5 किग्रा नीम के पत्ते।

• 500 ग्राम तम्बाकू पाउडर।

• 500 ग्राम तीखी हरी मिर्च की चटनी।

• 500 ग्राम देशी लहसुन की चटनी।

विधि

कटे हुये नीम के पत्ते व अन्य सामग्री गौमूत्र में मिलाकर धीमी आंच पर एक उबाल आने तक उबालें। मिश्रण को 48 घंटे तक छाया में रखें व सुबह-शाम घोले। इसे कपड़े में छानकर 6 से 8 ली. घोल 200 ली. पानी में मिलाकर एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करें। इसे 3 माह के अन्दर ही प्रयोग करें।

ब्रह्मास्त्र

बड़ी सूडियों/इल्लियों के नियंत्रण हेतु

• 10 ली. देशी गाय का मूत्र

• 5 किग्रा. नीम के पत्ते।

• 2-2 किग्रा. अमरूद, पपीता, अरण्डी की चटनी।

विधि

इन वनस्पतियों की चटनी को गौमूत्र में मिलाकर धीमी आंच पर एक उबाल आने तक उबाले इसके बाद 48 घंटे तक ठंडा होने के लिये रख दें। 2.5 से 3.5 ली. घोल को 100 ली. पानी में मिलाकर एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करें। इस घोल का प्रयोग 6 माह तक किया जा सकता है।

दशपर्णी अर्क

सभी प्रकार की सूडियी/इल्लियों के नियंत्रण।

- 200 ली. पानी।
- 2 किग्रा. देशी गाय का गोबर।
- 2-2 किग्रा. वनस्पतियों के पत्ते जैसे नीम, करंज, अरण्डी, सीताफल, तुलसी, धतूरा, आम, अमरूद, कड़ुआ करेला, अनार, पपीता इत्यादि।
- 500 ग्रा. हल्दी पाउण्डर।
- 500 ग्राम अदरक की चटनी।
- 10 ग्राम हींग पाउडर।
- 1 किग्रा. तम्बाकू।
- 1 किग्रा. हरी मिर्च की चटनी।
- 1 किग्रा. देशी लहसुन की चटनी।

विधि

इन सबको मिलाकर लकड़ी से अच्छी तरह से घोलें फिर बोरें से ढककर छाया में 30 से 40 दिन रखें व दिन में 2 बार घोले इसके बाद कपड़े से छानकर उसको भडारण करें। प्रति एकड़ 200 ली. पानी में 6 ली. दशापर्णी अर्क मिलाकर प्रयोग करें।

निष्कर्ष

प्राकृतिक खेती भारत में आम जन मानस के लिए खाद्य सुरक्षा को बेहतर बनाने में मदद कर सकती है, खासकर लघु एवं सीमांत कृषकों हेतु जिनके पास आधुनिक इनपुट तक पहुंच नहीं है या वे उन्हें वहन करने में सक्षम नहीं है, प्राकृतिक तकनीक पर भरोसा करके किसान उच्च लागत के बिना स्वस्थ, एवं पौष्टिक भोजन का उत्पादन कर सकते हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव

खलील खान*, अजय कुमार सिंह एवं शुभम् यादव
कृषि विज्ञान केन्द्र, कानपुर देहात, उत्तर प्रदेश
पत्राचारकर्ता: khankhalil64@gmail.com

परिचय

वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या के रूप में उभर कर आया है। जलवायु परिवर्तन कोई एक देश या राष्ट्र से सम्बन्धित नहीं है। अपितु यह एक वैश्विक समस्या है,जो समस्त पृथ्वी जगत हेतु चिन्ता का कारण बनती जा रही है। देखा जाए तो जलवायु परिवर्तन से भारत सहित पूरी दुनिया में बाढ़, सूखा, कृषि संकट एवं खाद्य सुरक्षा बीमारियों आदि का खतरा बढ़ा है। चूँकि भारत की एक बड़ी जनसंख्या (लगभग 60 प्रतिशत आबादी) आज भी कृषि पर निर्भर है, और इसके प्रभाव से परिचित है इसलिए कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को देखना बहुत जरूरी हो जाता है। वैश्विक जलवायु जोखिम सूचकांक 2021 के अनुसार भारत जलवायु परिवर्तन से सबसे अधिक प्रभावित दस शीर्ष देशों में शामिल है। जलवायु की बदलती परिस्थितियाँ कृषि को सबसे अधिक प्रभावित कर रही है, क्योंकि लम्बे समय में ये मौसमी कारक जैसे तापमान, वर्षा, आर्द्रता आदि पर निर्भर करती है। अतः इस लेख में हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि जलवायु परिवर्तन कृषि को प्रभावित करता है।

जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव

उत्पादन में कमी

वैश्विक तापमान के कारण कृषि उत्पादन में गिरावट आ रही है। जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (IPCC) के अनुसार वैश्विक कृषि पर जलवायु परिवर्तन का कुल प्रभाव नकारात्मक होगा। हालांकि कुछ फसल लाभान्वित भी होगी। किन्तु फसल उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन का कुप्रभाव सकारात्मक से ज्यादा नकारात्मक होगा। भारत में 2010 से 2039 के बीच परिवर्तन के कारण लगभग 4.5 प्रतिशत से 9 प्रतिशत के बीच उत्पादन के गिरने की सम्भावना है। एक शोध के अनुसार यदि वातावरण का औसत तापमान 2^{O}C डिग्री सेल्सियस बढ़ता है,तो इससे गेहूँ का उत्पादन 17 प्रतिशत तक कम होने की संभावना है। इसी प्रकार 2^{O}C तापमान बढ़ने से धान का उत्पादन भी 0.75 टन प्रति हेक्टेयर कम होने की सम्भावना है।

कृषि योग्य परिस्थितियों में कमी

जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान के उच्च अक्षांस की ओर खिचने से निम्न अक्षांस प्रदेशों में कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। भारत के जल स्रोत तथा भंडार में तेजी से कमी हो रही है,जिससे किसानों को परम्परागत सिंचाई के तरीके छोड़कर पानी की खपत कम करने वाले आधुनिक तरीके एवं फसलें अपनानी होगी। ग्लेशियर के पिघलने से कई बड़ी नदियों के जल संग्रहण क्षेत्र में दीर्घावधिक रूप से कमी आ सकती है, जिससे कृषि एवं सिंचाई में जलवायु से गुजरना पड़ सकता है। एक रिपोर्ट के अनुसार, जलवायु परिवर्तन की वजह से प्रदूषण भू-क्षरण और सूखा पड़ने से पृथ्वी के तीन चौथाई भूमि क्षेत्र की गुणवत्ता कम हो गयी है।

औसत तापमान में वृद्धि

जलवायु परिवर्तन के कारण पिछले कई दशकों में तापमान में वृद्धि हुई है। औद्योगीकरण के प्रारंभ में अब तक पृथ्वी के तापमान में लगभग 0.7^{O}C की वृद्धि हो चुकी है। कुछ पौधे ऐसे होते है, जिन्हें एक विशेष तापमान की आवश्यकता होती है। वायुमंडल के तापमान बढ़ने पर उनके उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

जैसे गेहूँ, सरसो, जौ और आलू आदि इन फसलों को कम तापमान की आवश्यकता होती है, जबकि तापमान का बढ़ना इनके लिए हानिकारक होता है। इसी प्रकार अधिक तापमान बढ़ने में मक्का, ज्वार और धान आदि फसलों का क्षरण हो सकता है, क्योंकि अधिक तापमान के कारण उन फसलों में दाना नहीं बनता अथवा कम बनता है। इस प्रकार तापमान की वृद्धि इन फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

वर्षा के स्वरूप में बदलाव

भारत का दो तिहाई कृषि क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है और कृषि की उत्पादकता वर्षा एवं इसकी मात्रा पर निर्भर करती है। वर्षा की मात्रा व तरीकों में परिवर्तन से मृदा क्षरण और मिट्टी की नमी पर प्रभाव पड़ता है। जलवायु के कारण तापमान में वृद्धि से वर्षा में कमी होती है जिससे मिट्टी में नमी समाप्त हो जाती है। इसके अतिरिक तापमान में कमी व वृद्धि होने का प्रभाव वर्षा पर पड़ता है, जिस कारण भूमि में अपक्षय और सूखे की संभावनाएं बढ़ जाती हैं। वैश्विक तापमान के प्रभाव कुछ वर्षों में गहन रूप में प्रभावित कर रहे हैं। मध्य भारत 2050 तक शीत वर्षा में 10 से 20 प्रतिशत तक कमी अनुभव करेगा। पश्चिमी अर्धमरुस्थलीय क्षेत्र द्वारा सामान्य वर्षा की अपेक्षा अधिक वर्षा प्राप्त करने की सम्भावनायें है। इसी प्रकार मध्य पहाड़ी क्षेत्रों में तापमान में वृद्धि एवं वर्षा में कमी से चाय की फसल उत्पादन में कमी हो सकती है।

कार्बन डाइऑक्साइड में वृद्धि

कार्बन डाइऑक्साइड गैस वैश्विक तापमान में लगभग 60 प्रतिशत की भागीदारी करती है। कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि होने से तापमान में भी वृद्धि होती है, जिससे पेड-पौधों तथा कृषि पर भी इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। पिछले 30-50 वर्षों के दौरान कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा लगभग 450 पीपीएम तक पहुँच गयी है। हालांकि कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि कुछ फसलों जैसे गेहूँ तथा चावल के लिए लाभदायक है क्योंकि ये प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को तीव्र करती है और वाष्पीकरण के द्वारा होने वाली हानियों को कम करती है। परन्तु इसके बावजूद कुछ मुख्य खाद्यान्न फसले जैसे गेहूँ की उपज में गिरावट आना है, जिसका कारण कार्बन डाइऑक्साइड की वृद्धि ही है।

कीट एवं रोगों में वृद्धि

जलवायु परिवर्तन के कारण कीटों और रोगाणुओं में वृद्धि होती है। गर्म जलवायु में कीट-पतंगों की प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है, जिससे कीटों की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाती है और इसका कृषि पर काफी दुष्प्रभाव पड़ता है। साथ ही कीटों और रोगाणुओं को नियंत्रित करने की कीटनाशकों का प्रयोग भी कहीं ना कहीं कृषि फसल के लिए नुकसानदायक ही होता है।

हालांकि कुछ अधिक सूखा-सहिष्णु फसलों को जलवायु परिवर्तन में लाभ हुआ है। ज्वार की पैदावार, जिसका खाद्यान्न के रूप में प्रयोग दुनिया में विकासशील देश के अधिकांश लोग करते हैं, 1970 के दशक के बाद पश्चिमी, दक्षिणी और दक्षिण-पूर्वी एशिया में लगभग 0.9 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। उप सहारा अफ्रीका में 0.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। किन्तु यदि फसलों को छोड़ दिया जाए तो, कुल फसल उत्पादकता पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव नकारात्मक ही पड़ता है।

कृषि पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के उपाय

खाद्य और कृषि संगठन (FAO) के अनुमानुसार, 2050 तक विश्व की जनसंख्या लगभग 9 अरब हो जाएगी, जिससे खाद्यान्न की आपूर्ति और मांग के बीच अंतर को कम करने के लिए वर्तमान खाद्यान्न उत्पादन को दोगुना करने की आवश्यकता पड़ेगी। इसके लिए भारत जैसे कृषि प्रधान देशों को अभी से नये उपाय करने होंगे। हमारी कृषि व्यवस्था को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों में बचाने के अनेक उपाय हैं। जिन्हें अपनाकर कुछ हद तक कृषि पर जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव को कम किया जा सकता है। साथ ही पर्यावरण मित्र तरीकों का प्रयोग करके कृषि को जलवायु परिवर्तन के अनुकूल किया जा सकता है। कुछ प्रमुख उपाय निम्न प्रकार हैं।

वर्षा जल का उचित प्रबंधन

वातावरण के तापमान में वृद्धि के साथ-साथ फसलों में सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ती है। ऐसी स्थिति में जमीन का संरक्षण व वर्षा जल को एकत्रित करके सिंचाई हेतु प्रयोग में लाना एक उपयोगी कदम साबित हो सकता है। वाटर शेड प्रबंधन के माध्यम से हम वर्षा जल को संचित करके सिंचाई के रूप में उपयोग कर सकते हैं। इसमें एक ओर हमें सिंचाई में मदद मिलेगी, वहीं दूसरी ओर भू-जल पुनर्भरण में भी सहायक सिद्ध होगा।

जैविक एवं मिश्रित कृषि

रासायनिक खेती में हरित गैसों में वृद्धि होती है, जो वैश्विक मापन में सहायक होती हैं। इसके अलावा रासायनिक खाद व कीटनाशकों के प्रयोग में जहाँ एक ओर मृदा की उत्पादकता घटती है, वहीं दूसरी ओर मानव स्वास्थ्य को भी भोजन के माध्यम से नुकसान पहुंचाती है। अतः इसलिए जैविक कृषि की तकनीकों पर अधिक जोर देना चाहिए। एकल कृषि के स्थान पर मिश्रित कृषि लाभदायक होती है। मिश्रित कृषि में विविध फसलों का उत्पादन किया जाता है, जिससे उत्पादकता के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन से प्रभावित होने की संभावनायें नगण्य हो जाती है।

फसल उत्पादन में नई तकनीकों का विकास

जलवायु परिवर्तन के गंभीर प्रभावों को ध्यान में रखते हुए ऐसे बीज और नई किस्मों का विकास किया जाए जो नये मौसम

के अनुकूल हो। हमें फसलों के प्रभाव तथा उनके बीज बोने के समय में भी परिवर्तन करना होगा। ऐसी किस्मों को विकसित करना होगा जो अधिक तापमान, सूखे तथा बाढ़ जैसी संकटमय परिस्थितियों को सहन करने में सक्षम हो। पारम्परिक ज्ञान तथा नई तकनीकों के समन्वयन और समावेशन द्वारा मिश्रित खेती तथा अतः खेती करके जलवायु परिवर्तन के खतरों से निपटा जा सकता है।

जलवायु स्मार्ट कृषि (क्लाइमेट स्मार्ट एग्रीकल्चर)

देश में जलवायु स्मार्ट कृषि (Climate smart Agriculture-CSA) विकसित करने की ठोस पहल की गयी है, जिनके लिए राष्ट्रीय परियोजना भी लागू की गई है। दरअसल जलवायु स्मार्ट कृषि जलवायु परिवर्तन की तीन परस्पर चुनौतियों में निपटने की कोशिश करती है, उत्पादकता और आय बढ़ाना, जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होना तथा कम उत्सर्जन करने में योगदान करना। उदाहरण के लिए, यदि सिंचाई की बात करें तो जल के उचित इस्तेमाल के लिए सूक्ष्म सिंचाई पद्धति (माइक्रो इरिगेशन) को लोकप्रिय बनाना। जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन होना यह दर्शाता है, कि कृषि को जलवायु परिवर्तन सहन करने हेतु सक्षम बनाना एवं जलवायु परिवर्तन के अनुमानित प्रभावों में कृषि क्षेत्रों की पहचान करनी होगी। इसके साथ ही इस प्रकार नीतियों का माहौल तैयार करना जिनमें स्थानीय व राष्ट्रीय संस्थानों तक सफल क्रियान्वयन हो।

इस दिशा में भारत सरकार द्वारा किये गये प्रयास

भारत में सबसे पहले जलवायु परिवर्तन के प्रति स्वयं को अनुकूलित करने तथा सतत् विकास मार्ग के द्वारा आर्थिक और पर्यावरणीय लक्ष्यों को एक साथ हासिल करने का प्रयास किया गया है। इसी से प्रेरित होकर माननीय प्रधानमन्त्री जी ने 2008 में जलवायु परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय कार्ययोजना जारी की। जलवायु परिवर्तन पर निर्मित आठ राष्ट्रीय एक्शन प्लान में से एक (राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन) कृषि क्षेत्र पर भी केंद्रित है।

राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन (National Mission for Sustainable Agriculture - NMSA)

राष्ट्रीय सतत् कृषि मिशन वर्ष 2008 में शुरू किया गया। यह मिशन अनुकूलन पर आधारित है। इस मिशन द्वारा भारतीय कृषि को जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक प्रभावी एवं अनुकूल बनाने हेतु कार्य नीति बनाई गई। इस मिशन के उद्देश्यों में कुछ प्रमुख बातों पर ध्यान दिया गया है जैसे, कृषि से अधिक उत्पादन प्राप्त करना, टिकाऊ खेती पर जोर देना, प्राकृतिक जल-स्रोतों व मृदा संरक्षण पर ध्यान देना, फसल व क्षेत्रानुसार पोषक प्रबंधन करना, भूमि-जल गुणवत्ता बनाए रखना तथा शुष्क कृषि को बढ़ावा देना इत्यादि। इसके साथ ही वैकल्पिक कृषि पद्धति को भी अपनाया जाएगा और इसके तहत जोखिम प्रबंधन, कृषि संबंधी ज्ञान सूचना व प्रौद्योगिकी पर विशेष बल दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त, मिशन को परम्परागत ज्ञान और अभ्यास प्रणालियों, सूचना प्रौद्योगिकी, भू-क्षेत्रीय और जैव प्रौद्योगिकियों के सम्मिलन व एकीकरण में सहायता मिलेगी।

जलवायु अनुकूल कृषि में राष्ट्रीय नवाचार (National Innovations in Climate Resilient Agriculture NICRA)

यह राष्ट्रीय पहल, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) का एक नेटवर्क प्रोजेक्ट है, जोकि फरवरी 2011 में आया था। इस प्रोजेक्ट का उद्देश्य रणनीतिक अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी प्रदर्शन द्वारा जलवायु परिवर्तन एवं जलवायु सुभेद्यता के प्रति भारतीय कृषि की गहन क्षमता का बढ़ाना है। इसी को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने कृषि क्षेत्र में अनुसंधान एवं विकास को उच्च प्राथमिकता पर रखा है। इस परियोजना के अन्तर्गत निम्न चार अवयव (component) आते हैं-

- रणनीतिक अनुसंधान (Strategic Research)
- प्रौद्योगिकी प्रदर्शन (Technology Demonstration)
- प्रायोजित एवं प्रतियोगी प्रतिस्पर्धी अनुदान (Sponsored and Competitive grants)
- क्षमता निर्माण (Capacity Building)

उनके प्रमुख बिन्दुओं में भारतीय कृषि (फसल, पशु इत्यादि) को जलवायु परिवर्तनशीलता के प्रति सक्षम बनाना, जलवायु सहायक कृषि अनुसंधान में लगे वैज्ञानिकों व दूसरे हितधारको की क्षमता का विकास करना तथा किसानों का वर्तमान जलवायु खतरे के अनुकूलन हेतु प्रौद्योगिकी पैकेज का प्रदर्शन कर दिखाने का उद्देश्य रखा गया है।

अतः कहा जा सकता है, कि जलवायु परिवर्तन वैश्विक और भारतीय कृषि व्यवस्था पर वृहद स्तर पर प्रभाव डालता है। ऊपर दिये गए सुझावों व तकनीकों को अपनाकर कृषि व्यवस्था को जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव से बचाया जा सकता है। ऐसा करना वर्तमान समय की आवश्यकता है, अन्यथा भविष्य में इसके घातक परिणाम झेलने पड़ सकते हैं। इसी दिशा में अर्थात भारतीय कृषि को जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल और सक्षम बनाने में भारत सरकार द्वारा किये गए

ISSN No. 2583-3316

प्रयास भी सराहनीय है। इस प्रकार कृषि की जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव से बचाने के लिए हमें मिल-जुलकर पर्यावरण मित्र तरीकों को वरीयता देनी होगी ताकि हम अपने प्राकृतिक संसाधन को बचा सकें और कृषि व्यवस्था को अनुकूलनीय बना सकें।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन से कृषि पर कई तरह के प्रभाव पड़ते हैं, यह प्रभाव सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह के हो सकते हैं, जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान, वर्षा और ठंड तथा अन्य दिनों में मौसमो में बदलाव आने से कई राज्यों में फसल उगाने का समय अधिक लंबा हो रहा है। लंबे मौसमो का खाद्य उत्पादन पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह का असर हो सकता है। तथा मौसमी जल की कमी, बढ़ता तापमान और समुद्री जल के प्रवेश से फसल की पैदावार पर प्रभाव पड़ रहा है, जलवायु परिवर्तन से जुड़ी मौसमी घटनाओं के कारण कृषि उत्पादकता में अचानक कमी आ सकती है, जिससे कीमतों में भी तेजी से बढ़ोतरी हो सकती है।

❖❖

For the welfare of the Farmer's, the society "Society for Advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors" willing to publish E-magazine in the name of "Krishi Udyan Darpan E-Magazine (Hindi) / **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine (English**, Innovative Sustainable Farming**.)**, which covers across India.**

AUTHORS GUIDELINE

All authors submitting articles must be annual or Life member of **SAAHAS, Krishi Udyan Darpan** E-Magazine Hindi / **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine English**, (Innovative Sustainable Farming**). Articles must satisfy the minimum quality requirement and plagiarism policy. Author's can submit the original articles in Microsoft Word Format through provided email, along with scanned copy of duly signed **Copyright Form**. Without duly signed Copyright Form, submitted manuscript will not processed.

1. The manuscript submitted by the author(s) has the full responsibility of facts and reliable in the content, the published article in **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine (Hindi) / **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine English**, (Innovative Sustainable Farming**.) Editor/ Editorial board is not reliable with the manuscript.
2. Must be avoiding recommendation of Banned Chemicals by Govt. Of India.
3. The manuscript submitted by the author(s) should be in Microsoft Word along with the PDF file and the 2-3 (Coloured/Black) pictures should be in high quality resolution in JPEG format, manuscript contains pictures are should be original to the author(s).
4. Articles must be prepared in an editable Microsoft word format and should be submitted in the online manuscript submission system.
5. Write manuscript in **English** should be in **Times New Roman with font size 12 point in single spacing** and line spacing will be 1.0.
6. Write manuscript in **Hind**i should be in **Kurti Dev10 / Mangal with font size 12 point in single spacing** and line spacing will be 1.0.
7. The title should be short and catchy. Must be cantered at top of page in Bold with Capitalize Each Word case.
8. Authors Names, designations and affiliations should be on left below the title. Designations and affiliations should be given below the Authors' Names. Indicate corresponding author by giving asterisk (*) along with Email ID
9. The sequence of the authors will not be changed as it was given at the time of submission in copyright form.
10. Not more than five authors of one article.
11. It should summarize the content of the article written in simple sentences. (Word limit 100 -150) and the full article should contains (**1600 words maximum or 3 page of A4 Size**)
12. The text should be clear, giving complete details of the article in simple Hindi/English. It should contain a short introduction and a complete methodology and results. **Authors must draw Conclusions and the Reference of their articles at last**. The abbreviation should be written in full for the first time. Scientific names and technical nomenclature must be accurate. Tables, figures, and photographs should be relevant and appropriately placed with captions among the texts.
13. Introduction must present main idea of article. It should be well explained but must be limited to the topic.
14. Avoid the **Repetitions** of word's, sentences and Headings.
15. The main body of an article may include multiple paragraphs relevant to topic. Add brief subheads at appropriate places. It should be informative and completely self-explanatory.
16. Submitted manuscript are only running article and contains the field of Agriculture, Horticulture and Allied sectors.
17. All disputes subject to Prayagraj Jurisdiction only.

RNI. : UPENG04418

Address :- 3/2 Drummand
Road Opp. Nathani Hospital
Prayagraj - 211001

ABOUT THE SOCIETY

Father of Nation Mahatma Gandhi's concept of rural development meant self-reliance, and least dependence on outsiders. India is an agrarian country and about 65% of our population lives in rural areas. But unfortunately, most of us do not have any idea about the extent of poverty and the real conditions of rural India.

With the purpose of serving the agricultural fraternity and farming community the Society for Advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors (SAAHAS) was founded in 2020 (under Society Registration Act, 1860). Among multifarious ways of serving farming community we are involved in training of the farmers by organising technology dissemination programmes in villages, guiding them to adopt good agricultural practices involving planned crop management. It helps in reducing farm base losses and motivating them to become farmer level entrepreneur rather than a simple producer. It involves initiating skill based knowledge to the student of agriculture, horticulture and allied sectors to encourage them to serve the farmers in the best possible ways.

SAAHAS calls us to look into the genuine problems of farmers and address those issues for their betterment in the arena of Agriculture, horticulture and allied sectors. Besides agriculture, horticultural crop production has been given a major focus by Govt. of India in future crop diversification, improving livelihood through doubling farmers' income, economic opportunities through export and job opportunities. While good beginning is made, much is to be achieved in different areas in agro-horticulture sector.

Apart from that, SAAHAS helps developing the culture to involve more number of women in farming, processing of crops and value addition thereof for higher returns in terms of total income. SAAHAS eagerly involves with the farmers and agriculture entrepreneur to motivate them for introducing hi-tech farming, which includes growing of high value horticultural crops in hydroponics, aeroponics, polyhouse, net house and greenhouse. The society has geared up its activities to take up the challenges of biotic and abiotic stresses, emerging needs of quality seeds and planting material and reducing cost of production.

There are several government and non-government organisations intended of farmer's welfare; still there is dire need for more involvement and attachment with the farmers. Our society's noble initiative can ensure diminishing of the persistent gap between agro-technocrats, scientists with the needy farmers. We not only ensure that the farmers choose right variety of right crop, better nutrient management through diagnosis recommended system and pest diagnosis but we also help them to sale their produce at premium rates. There is a major issue of chemical residues in food, soil and ecology which is also a big concern of the century. The Society also aims to motivate the farmers either for minimal use of chemical inputs or total adoption of organic farming. Consultancy, training, awareness programs, national and international seminars and symposia and technical services are the prime activities of the SAAHAS.

Society for advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors publishes peer reviewed scientific journal, 'Journal of Applied Agriculture and Life Sciences (JAALS)', biannually since January 2020 focusing on articles, research papers and short communications of both basic and applied aspect of original research in all branches of Agriculture, horticulture and other allied sciences. To apprise the scientists and all those who are working in the field of Agriculture, horticulture and allied sectors about recent scientific advancement is the aim of the Journal.